चन्दामामा
मई १९७२
E.D. 2 PAIS

everest/122b/PP hin

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस अंक के साथ रंगीन सचित्र धारावाही 'शिलारथ' समाप्त हो रहा है। अगले मास से एक नया धारावाही शुरू होने जा रहा है।
'अबू कीर-अबू सीर' नामक लंबी कथा भी इस अंक के साथ समाप्त हो रही है। 'भला-बुरा' नामक बेताल कथा से हमें यह उपदेश मिलता है कि हमारा उपकार करनेवालों में कुछ लोग समाज के लिए उपकारी नहीं हो सकते, ऐसे लोगों के स्वभाव से परिचित होने पर उनसे हमें उपकार नहीं पाना है।
वर्ष : २४
मई १९७२
अंक : ९
CHITRA

कर्मायत्तं फलं पुंसां,
बुद्धिः कर्मानुसारिणी ;
तथापि सुधिया भाव्यं
सुविचार्यैव कुर्वता । ॥ १ ॥

[मनुष्यों के कार्य के अनुरूप उसका फल होता है । कार्य के अनुसार बुद्धि चलती है ; फिर भी बुद्धिमान को सोच-समझकर कार्य करने होंगे ।]

कुदेशं च, कुवृत्तिं च,
कुभार्यां, कुनदीं, तथा,
कुद्रव्यं च, कुभोज्यं च
वर्जयेत्तु विचक्षणः । ॥ २ ॥

[विवेकवान को चाहिए कि वह बुरे देश, बुरे पेशे, बुरी पत्नी, बुरी नदी, बुरे धन तथा बुरे भोजन को छोड़ दे ।]

यो ध्रुवाणि परित्यज्य
अध्रुवं परिषेवते,
ध्रुवाणि तस्य नश्यंति,
अध्रुवं नष्टमेव च । ॥ ३ ॥

[स्थिर वस्तुओं को त्याग जो अस्थिर वस्तुओं को अपनाता है, उसे न स्थिर वस्तुएं प्राप्त होती हैं और न अस्थिर वस्तुएँ ही हाथ लगती हैं ।]

उचित - अनुचित

जादू का खरगोश

एक जमीन्दार के गाँव में एक बूढ़ी अपने पोते के साथ रहती थी। गरीबी से वे परेशान थे। चवन्नी भी उनके लिए सौ रुपयों के बराबर थी। उस हालत में बूढ़ी के मन में एक विचार आया। वह एक मंत्र जानती थी। उस मंत्र की मदद से वह खरगोश के रूप में बदल सकती थी। उसने सोचा कि इस मंत्र के जरिये थोड़े से पैसे कमा ले तो क्या बुरा है?

उस गाँव के जमीन्दार को शिकार खेलने का बड़ा शौक था। यदि कोई उसके पास जाकर कहता कि अमुक जगह उसे खरगोश दिखाई दिया है तो वह उसे पैसे दे देता। गरीबी से तंग आकर बूढ़ी ने एक दिन अपने पोते से कहा—"बेटे, तुम जमीन्दार के पास जाकर यह कह दो कि तुम्हें इमली के बगीचे के पास एक खरगोश दिखाई दिया है। वह तुम्हें पैसे देंगे। मगर किसीसे यह न कहना कि मैंने तुम्हें भेजा है।"

बूढ़ी के कहे अनुसार जमीन्दार के घर जाकर पोते ने बताया कि उसने इमली के बाग के पास एक खरगोश को देखा है। जमीन्दार ने उस लड़के के हाथ एक चवन्नी रख दी और शिकारी कुतों को लेकर खरगोश की खोज में चल पड़ा।

लड़के के कहे अनुसार इमली के बाग के पास एक खरगोश दिखाई पड़ा। जमीन्दार ने झट अपने शिकारी कुत्तों को उस पर भड़काया। लेकिन कुतों के पास आते ही खरगोश झाड़ियों में खिसक गया और वह घर लौट कर फिर बूढ़ी के रूप में बदल गया। जमीन्दार ने खरगोश की बड़ी खोज की और आखिर निराश हो घर लौट आया। इसके बाद कई बार वह लड़का जमीन्दार के घर गया, फलानी जगह खरगोश का पता

बिमलेश शर्मा

बता कर चवन्नी ले आया। जमीन्दार हर बार शिकार खेलने गया, लेकिन हर बार खरगोश उसे चकमा देकर चंपत होता गया।

एक बार बूढ़ी ने अपने पोते से कहा– "बेटा, जमीन्दार हमें जो चवन्नी देते हैं, उससे हमारा गुजारा होता है, लेकिन हमारा काम खतरे से खाली नहीं है। मैं समझती हूँ कि अब तक जमीन्दार को भी संदेह हुआ होगा। सच्ची बात उन्हें मालूम हो गयी तो वे हमारी जान लेकर छोड़ेंगे।"

बूढ़ी का डरना सच निकला। जमीन्दार के मन में संदेह पैदा हुआ। उसने सोचा कि हर बार खरगोश का शिकारी कुत्तों से बचकर अदृश्य हो जाने में कोई धोखा है।

इसलिए इस बार लड़का जब खरगोश का पता ले आया, तब तक जमीन्दार शिकारी कुत्तों के साथ तैयार बैठा था, और समाचार के मिलते ही कुत्तों को भड़काया।

इस बार कुत्तों ने खरगोश को बूढ़ी की झोंपड़ी तक पीछा किया। आखिर एक छोटे से सुरंग में से खरगोश झोंपड़ी के भीतर घुस गया। शिकारी कुत्ते सुरंग के पास खड़े भूँकने लगे। जमीन्दार ने झोंपड़ी के पास जाकर दर्वाजा खटखटाया। बूढ़ी ने दर्वाजा तो खोला, मगर वह थकावट के मारे हाँप रही थी।

जमीन्दार ने गुस्से में आकर पूछा– "क्या तुम ही खरगोश हो? यह तुम्हारी कैसी चाल है?"

बूढ़ी ने रोते हुए अपनी गरीबी की कहानी सुनायी। यह भी बताया कि उसके तथा उसके पोते का पेट भरने के लिए इस मंत्र के सिवा उनके पास कोई दूसरा जरिया नहीं है। इसलिए उन्हें क्षमा कर दे।

बूढ़ी को उस अवस्था में अपने पोते के वास्ते जो तक्लीफ़ें झेलनी पड़ रही हैं, उन्हें देख जमीन्दार को उन पर दया आयी, तब उसने उनकी मदद भी की। उस दिन से बूढ़ी अपने पोते के साथ आराम से दिन बिताने लगी।

जादू की जड़ी बूटी

पुराने जमाने की बात है। एक गाँव में एक दुष्ट जमीन्दार रहा करता था। अगर कोई उसके दर्वाजे पर भीख मांगने जाता, तो उन्हें मार भगा देता, आइंदा वे लोग उसके दर्वाजे पर न आयें, इस ख्याल से उन पर कुत्तों को भड़का देता।

एक बार उस गाँव में अकाल पड़ा। किसी को एक जून भी भर पेट खाना न मिलता था। मगर गाँव के सभी लोग जानते थे कि जमीन्दार के यहाँ बहुत सारा अनाज भरा पड़ा है। लोगों ने जमीन्दार के पास जाकर मिन्नत की, पर उस दुष्ट का दिल पिघला तक नहीं।

उस हालत में एक युवक ने गाँववालों को समझाया कि वह जमीन्दार को चकमा देकर अनाज ला देगा। वह सीधे जमीन्दार के घर के सामनेवाले बगीचे में जा पहुँचा। एक ऊँचे पेड़ के नीचे जा बैठा और वह डालों की ओर ध्यान से देखने लगा।

जमीन्दार खाना खाकर खिड़की के पास आया। उसने ज्यों ही बाहर देखा, त्यों ही उसे वह युवक दिखाई दिया। जमीन्दार ने सोचा कि वह युवक चोरी करने आया है, इसलिए गरजकर बोला– "कौन है रे वहाँ! क्या करता है?"

युवक ने जमीन्दार की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया, वह पेड़ की डालों में ध्यान से देख रहा था।

जमीन्दार बाहर आया, और युवक के निकट जाकर बोला–"अरे, डालों में क्या देखते हो? बुलाने पर बोलते क्यों नहीं? क्या बहरे हो तुम?"

"बात कुछ नहीं, घोंसले की ओर देखता हूँ। कल मैंने अग्निपक्षी को इस पेड़ पर बैठते देखा। यदि उस पक्षी ने

चीन की लोक कथा

यहाँ पर अपना घोंसला बनाया हो तो उस में मुझे जादू की जड़ी बूटी मिल जायगी। क्या आप यह बात नहीं जानते? देखिये, उस डाल की छोर पर एक घोंसला है।" युवक ने उत्तर दिया।

"जादू की जड़ीबूटी! वह कैसी होती है?" जमीन्दार ने पूछा।

"वह तो एक अनोखी जड़ीबूटी है। एक हजार साल में एक बार वह फूलती है। इस फूल में फल लगने में एक हजार साल और लगते हैं? मगर उसकी छोटी सी टहनी में भी अद्भुत शक्ति होती है!" युवक ने समझाया।

"अरे यह तो बताओ कि उसकी अद्भुत शक्ति क्या है?" जमीन्दार ने खीझकर पूछा।

"एक शक्ति यह है कि उसके एक छोटे से टुकड़े को अगर हम अपने बालों में रख लेते हैं तो हम अदृश्य हो जाते हैं। हमें कोई देख नहीं सकता। तब हम जो चाहे सो कर सकते हैं। दूसरी बात......"

युवक कुछ कहने ही जा रहा था कि जमीन्दार गरजकर बोला-"पहले तुम यहाँ से भाग जाओ।"

युवक ने चारों ओर नजर दौड़ाकर कहा-"यहाँ तो कोई नहीं है। आप किसको डांट रहे हैं?"

"तुम्हीं से कहता हूँ। तुरंत यहाँ से चले जाओ! वह जड़ीबूटी मेरी है। यह बगीचा भी मेरा है।" इन शब्दों के साथ जमीन्दार और ऊँचे स्वर में चिल्ला पड़ा।

"ओह, ऐसी बात है! लेकिन उसका पता मैंने लगाया। मैं उसे नष्ट भी कर सकता हूँ।" ये शब्द कहते वह युवक उस पेड़ पर चढ़ने लगा।

"अच्छा, ठहर जाओ, मैं तुम्हें एक सौ स्वर्ण मुद्राएँ देता हूँ।" जमीन्दार ने कहा।
"क्षमा कीजियेगा। मैं उसे इतने सस्ते में बेच नहीं सकता।" युवक ने कहा।

जमीन्दार मोल-भाव करने लगा।

"मुझे धन की ज़रूरत नहीं। यदि आप पचास बोरे धान दिलायेंगे तो मैं वह जड़ीबूड़ी आपको छोड़ सकता हूँ।" युवक ने कहा।

उसकी शर्त को जमीन्दार ने मान लिया। इस पर युवक धान ले गया और गाँव के गरीबों में बांट दिया।

इस बीच जमीन्दार ने अपने नौकरों द्वारा घोंसले को उतरवा दिया और उसे अपनी पत्नी के पास ले जाकर बोला– "बताओ, अब मैंने क्या किया है?"

"मैं क्या जानूँ? किसी को दगा दिया होगा।" पत्नी ने जवाब दिया।

"तुम बता नहीं सकोगी? मैंने एक जादू की जड़ीबूड़ी कमा ली है। इससे हम अपार धन मिलेगा।" जमीन्दार ने कहा।

जमीन्दार की पत्नी ने घोंसले की ओर संदेह भरी दृष्टि से देखते हुए कहा–"यही क्या जादू की जड़ीबूटी?" पर उस घोंसले में सिर्फ़ तिनके और तीलियाँ थीं।

"हमें इस बात का पता लगाना है कि इन तीलियों में जादू की जड़ी-बुटी कौन-सी

है? मैं एक-एक तीली निकाल कर सर पर रखते जाता हूँ। तुम्हें सिर्फ़ यही बताना होगा कि मैं कब अदृश्य हो जाता हूँ, समझी।" जमीन्दार ने कहा।

इसके बाद जमीन्दार एक एक तीली चुन कर सर पर रख लेता और पत्नी से पूछता–'क्या मैं दिखाई देता हूँ?' और पत्नी बार बार यही जवाब देती कि 'हाँ, दिखाई देते हो।'

आखिर पत्नी खीझ उठी और यह कह कर उठ चली गयी–"मुझे कुछ दिखाई नहीं देता।" तब जमीन्दार ने सोचा कि उसके सर पर जो तीली है, वही जादू की जड़ी बूटी है। फिर क्या था, वह मूर्ख उस तीली को अपने बालों में खोंसे शहर की ओर चल पड़ा।

रास्ते चलते उसे एक जगह मिठाइयों की खुशबू लगी। उसके पेट में भूख मचलती मालूम हुई। पास की दूकान से दो लड्डू लेकर खाते चल पड़ा।

दूकानदार जमीन्दार को जानता था। उसने सोचा कि जल्दी जल्दी कहीं जाते जमीन्दार पैसे देना भूल गया है, लौटती बार जरूर देगा, यह सोचकर वह चुप रह गया।

जमीन्दार ने सोचा कि वह अदृश्य है, इसीलिए दूकानदार ने उससे पैसे नहीं मांगे, इस विचार के आते ही उसकी हिम्मत बढ़ गयी।

एक दूसरी दूकान का मालिक दूकान बंद करते हुए सारे रुपये गिन कर थैली में भर रहा था। उन रुपयों को देखते ही जमीन्दार की आँखें चमक उठीं। उसने दूकनादार के पास जाकर रुपयों की थैली खींच ली। तुरंत दूकानदार ने जमीन्दार का हाथ पकड़ लिया और चिल्ला उठा–"चोर, चोर, पकड़ लो।" वहाँ पर लोगों की भीड़ लग गयी। सबने जमीन्दार को जी भर कर पीटा। जमीन्दार गिरते-संभलते घर आ पहुँचा।

शिलारथ

[२९]

[खड्गवर्मा तथा जीवदत्त पुजारी और स्वर्णाचारी को साथ ले जंगल में चले गये। वहाँ पर एक पेड़ के नीचे बाघ के बच्चों को हाथ में लिये चिल्लानेवाला एक युवक उन्हें दिखाई पड़ा। खड्गवर्मा और जीवदत्त जब उसके निकट पहुँचे तब गेंडे पर सवार एक व्यक्ति ने आगे बढ़कर उन्हें बन्दी बनाने का आदेश दिया। तब–]

गैंडे पर सवार एक व्यक्ति ने अपने अनुचरों को चेतावनी दी कि वे खड्गवर्मा और जीवदत्त को बन्दी बनावे। तब जीवदत्त ने आगे बढ़ कर अपने दण्ड से गैंडे पर सवार उस व्यक्ति के सर पर प्रहार किया। वह व्यक्ति "अरण्य माता!" चिल्लाते नीचे गिर पड़ा।

"अरे अरण्य माता के बच्चे! तुम लोग अपने हथियार डाल कर हमारे अधीन हो जाओ, वरना तुम्हारी मौत निश्चित है! तुम लोगों ने अपने नेता की हालत तो देखी ही है!" जीवदत्त चिल्ला उठा।

"पालतू बाघ को तुम लोगों पर उकसा दूँ या तुम पेड़ों की आड़ में से हमारे सामने आ जाते हो?" खड्गवर्मा ललकार उठा।

चार जंगली युवक हाथ उठाये पेड़ों की आड़ में से उनके सामने आ पहुँचे। उनके हाथों में पत्थर के बने हथियार थे।

"तुम लोग अपने हथियार नीचे डाल दो!" जीवदत्त ने उन्हें चेतावनी दी और खड्गवर्मा से कहा–"मित्र! ये लोग जंगली जाति के तो हैं, पर पिछड़े हुये। मगर बाघ के मुँह में सर देने आये इस युवक ने हमारे सामने एक और समस्या खड़ी कर दी। हम विन्ध्याचल की ओर कैसे बढ़े?"

जीवदत्त के ये शब्द सुनकर वह युवक रुद्ध कंठ से बोला–"महाशय, मुझे भी अपने साथ ले चलिये। बाघ के मुंह से मुझे बचाकर अरण्यपुर के गणाचारी को मुझे मत सौंपियेगा। वह मुझे तंग करेगा।"

जीवदत्त कोई जवाब देने ही जा रहा था तभी विघ्नेश्वर पुजारी तथा स्वर्णाचारी पेड़ से उतरकर वहाँ पर आ पहुँचे।

"क्या तुम दोनों अभी ज़िंदा हो? अब तक कहाँ रहें?" खड्गवर्मा ने पूछा।

"हे महावीरो, हम दोनों पेड़ की डालों में छिपे रहकर तुम्हारे शौर्य और पराक्रम को आश्चर्य के साथ देख रहे थे।" विघ्नेश्वर पुजारी ने उत्तर दिया।

"अरे, वहीं पर बैठे देख सकते थे, उतरकर क्यों आये?" ये शब्द कहकर खड्गवर्मा जीवदत्त की ओर मुड़ा और बोला–"जीवदत्त! इन कमबख्तों को हम यहीं पर छोड़ अपने रास्ते चले चलेंगे।"

"खड्गवर्मा! जल्दी न करो। इनको हम आसानी से छोड़ नहीं सकते।" जीवदत्त ने खड्गवर्मा को समझाया, तब उस युवक से कहा–"तुम्हारा क्या नाम है? तुम खतरे से बच गये हो, इसलिए अरण्यपुर के गणाचारी के चंगुल से बचकर कहीं भाग जाओ।"

"मेरा नाम अरण्यमल्ल है। गणाचारी की आँख बचाकर इस जंगल में जीना किसी के लिए मुमकिन नहीं है। मुझे भी अपने साथ ले जाइये। उसने धोखे से मेरी गद्दी पर अधिकार कर लिया है।" युवक ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है! तुम्हारी समस्या को भी हल करके तब चलेंगे। लेकिन यह तो बताओ कि गणाचारी ने किस तरह धोखे से तुम्हारी गद्दी ले ली है?" जीवदत्त ने पूछा।

अरण्यमल्ल ने सारी बातें संक्षेप में सुनायीं। अरण्यपुर का राजा अरण्यमल्ल का पिता था। तीन मास पूर्व उसकी मृत्यु हो गयी थी। उस दिन से अरण्यमल्ल को गद्दी से उतारने के लिए गणाचारी षड़यंत्र करता आ रहा है। पर वह सफल न हो सका। आखिर एक हफ़्ता पहले गणाचारी ने अपने कुल के बुजुर्गों को अरण्यमाता के मंदिर में इकट्ठा किया और बताया कि अरण्यमाता ने उसे स्वयं बताया है कि अरण्यमल्ल शासन करने योग्य नहीं है। चाहे तो एक बार और वह यह समाचार माता के मुँह से कहलवा सकता है।

इसके बाद उसने अरण्यमाता की मूर्ति के सामने धूप लगाया और पूछा–"माताजी, क्या अरण्यमल्ल इस गद्दी पर बैठने योग्य है या कोई योग्य व्यक्ति और है?"

तुरंत उस मूर्ति के मुँह से ये बातें सुनाई दीं–"अरण्यमल्ल अयोग्य व्यक्ति है। वह शासन करने लायक़ नहीं। तुम मेरे गणाचारी हो, यदि तुम गद्दी पर बैठोगे तो सारे राज्य में चैन की बंसी बजेगी और जनता की उन्नति होगी।"

"हे बुजुर्गो! सुनो, सुनो तो सही!" इन शब्दों के साथ गणाचारी उछलने लगा। अरण्यमल्ल क्रोध से भर उठा और एक पत्थर के गदे से अरण्यमाता की मूर्ति पर प्रहार किया, जिससे मूर्ति का एक हाथ टूटकर नीचे जा गिरा।

"अपचार करनेवाले उस दुष्ट को पकड़ लो। उसे मार डालो।" गणाचारी चिल्ला उठा। वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों में से कुछ युवकों ने अरण्यमल्ल को पकड़ना चाहा, लेकिन वह जंगल की ओर भाग खड़ा हुआ। फिर भी गणाचारी के अनुचर उसे पकड़ने के लिए सारे जंगल को छानने लगे। इस पर अरण्यमल्ल ने सोचा कि उसके

चंगुल से बचना असंभव है। इसलिए वह शेर के मुँह में जाना चाहता था।

"अरण्यमल्ल! पत्थर की मूर्तियों से बोलवाने वाले उस गणाचारी को देखने की हमारी इच्छा है। इसलिए हमें अरण्यपुर ले जाओ।" जीवदत्त ने कहा।

अरण्यमल्ल ने कांपते स्वर में कहा— "क्या कहा? सीधे अरण्यपुर में जाना है? गणाचारी के तो कई अनुचर हैं। वे सब उसके महात्म्य पर विश्वास करते हैं।"

"अरे, तुम हमारे साथ अरण्यपुर तक चलने को तैयार हो या मैं तुम्हें अपने पालतू बाघ का आहार बना दूं?" खड्गवर्मा ने हँसते हुए पूछा।

गैंडे का नेता आपादमस्तक कांप उठा और बोला—"महाशय, हमारी रक्षा कीजिये। अरण्यमाता ने खुद बताया है कि अरण्यमल्ल पापी है। ऐसी हालत में हम उसकी सहायता कैसे कर सकते हैं?"

इस पर जीवदत्त ने गैण्डे के नेता से कहा—"इस की सचाई का पता जल्दी लग जायगा। तुम लोग हमें अरण्यपुर का रास्ता बता दो।"

सब लोग अरण्यपुर की ओर चल पड़े। खड्गवर्मा ने बाघ के बच्चों को कंधे पर ले लिया और जंगली लता से बंधी बाघिन को खींचते चल पड़ा। वे लोग बड़ी दूर की यात्रा समाप्त करके सूर्यास्त तक अरण्यपुर में जा पहुँचे। उन्हें देख गणाचारी तथा उसके अनुचर घबरा गये।

जीवदत्त ने अपने दण्ड को ऊपर उठा कर उच्च स्वर में कहा—"हे अरण्यपुर के गणाचारी। मैं ने सोचा था कि तुम्हारा अरण्यपुर कोई नगर जैसा होगा। मगर यहाँ तो गुफाएँ हैं। ये सब घरौंदे जैसी मालूम होती हैं। मैं इसे अपने मंत्र के बल से भस्म कर सकता हूँ। मगर मैं पहले तुम्हारी अरण्यमाता की सचाई का पता पाना चाहता हूँ। मैं किस उद्देश्य को लेकर यहाँ आया हूँ, इसका परिचय गैण्ड़े का नेता देगा! तुम कान खोलकर सुनो।"

इसके बाद गैण्डे के नेता ने गणाचारी को जंगल का सारा वृत्तांत सुनाया।

यह वृत्तांत सुनकर गणाचारी और भयभीत हो उठा और खड्गवर्मा तथा जीवदत्त के सामने पहुँचकर झुककर उन्हें प्रणाम किया, तब बोला—"महाशय! आपके साथ रहनेवाले अरण्यमल्ल ने अरण्यमाता के प्रति बड़ा अपचार किया है। माताजी ने स्वयं अपने मुंह से घोषित किया है कि गद्दी पर बैठने योग्य व्यक्ति मैं ही हूँ। यदि आप लोग माताजी की बातें स्वयं सुनना चाहते हैं तो आप रात के दस बजे मंदिर में आ जाइये।"

"हम जरूर आयेंगे। अरण्यमाता की बातें सबके सामने खुद सुनकर हम इस अरण्यमल्ल को अपनी पालतू बाघिन का आहार बनाकर अपने रास्ते चले जायेंगे।" जीवदत्त ने कहा।

गणाचारी के अनुचर खड्गवर्मा, जीवदत्त तथा उनके साथ आये हुये लोगों को एक शिथिल भवन में ले गये और वहाँ पर उनके ठहरने का इंतज़ाम किया।

वह पूर्णिमा का दिन था, उसकी चांदनी में अरण्यपुर, उसके आसपास के पहाड़ तथा जंगल चमक रहे थे। ठीक दस बजे गणाचारी का एक अनुचर आया और खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को अरण्यमाता के मंदिर में चलने का निवेदन किया। वे दोनों विघ्नेश्वर पुजारी तथा स्वर्णाचारी को भी साथ ले मंदिर में पहुँचे। तब तक वहाँ पर गणाचारी तथा उसकी जाति के लोग इकट्ठे हो गये थे।

खड्गवर्मा और जीवदत्त ने अरण्यमाता की मूर्ति के पास जाकर मूर्ति की जांच की। मूर्ति काफ़ी ऊँची थी। उसका एक हाथ टूटा हुआ था। उसके दूसरे हाथ में पत्थर का एक बड़ा गदा था। मूर्ति का मुँह खुला हुआ था।

मूर्ति के सामने थाली में जलनेवाले अंगारे थे। गणाचारी ने उस पर गुग्गुल

डाल दिया। जिससे धुआँ निकल पड़ा। थोड़ी देर तक वह मंत्र पढ़ता रहा। इधर-उधर उछल-कूद करता रहा। इतने में उसका एक अनुचर फलों से भरी थाली ले आया। गणाचारी ने एक-दो केले लेकर माताजी के खुले हुए मुँह में डाल दिया तब पूछा—"अरण्यमाताजी, एक बार और बताओ, इस राज्य पर शासन करने योग्य व्यक्ति मैं हूँ या अरण्यमल्ल?"

तुरंत मूर्ति के मुँह में से ये शब्द सुनाई दिये—"अरण्यमल्ल पापी है। उसने मेरे हाथ को तोड़ डाला। हे गणाचारी! तुम्हीं इस राज्य का शासन करो। उस मल्ल को मुझे बलि दे दो।"

"सुनिये! सुनिये! माताजी बोल उठीं।" इन शब्दों के साथ गणाचारी उछलने लगा।

जीवदत्त ने मुस्कुराकर खड्गवर्मा के कान में कोई बात कह दी। तुरंत खड्गवर्मा बाघिन के पास दौड़ गया और तलवार खींचे खड़ा हो गया। जीवदत्त ने एक बार गणाचारी की ओर देखा। फिर मूर्ति के सामने रखी जलनेवाले अंगारों से भरी थाली को उठाकर मूर्ति के खुले हुए मुंह में अंगारे डाल दिये। दूसरे ही क्षण मूर्ति के पेट में से एक भयंकर चिल्लाहट सुनायी दी। सब चकित हो उसी ओर ताक रहे थे। तब मूर्ति के पीछे रखी लकड़ी की एक पेटी को खोल जलनेवाले कपड़ों समेत एक जंगली युवक बाहर दौड़ आया।

ये सारी बातें कुछ क्षणों में हो गयीं। मूर्ति के पेट में से जंगली युवक को बाहर आते देख गणाचारी घबरा गया और मंदिर से भागने लगा। वह मंदिर का द्वार पार कर ही रहा था तभी खड्गवर्मा ने अपनी तलवार से बाघिन के गले में बन्धी जंगली लता को काट डाला। बाघिन ने भागनेवाले गणाचारी के कंठ को पकड़ लिया। उसी वक़्त बाघिन के दोनों बच्चे अपनी माँ के पास दौड़ पड़े।

चांदनी की रोशनी में इस भयंकर दृश्य को देख सभी जंगली लोग घबरा गये। जीवदत्त ने उन लोगों से कहा–"तुम लोगों ने गणाचारी की दगाबाजी जान ली है न? अब तुम्हीं लोग निर्णय करो कि सचमुच तुम्हारे राजा बनने की योग्यता कौन रखता है?"

सभी जंगली एक स्वर में चिल्ला उठे– "हमारे राजा अरण्यमल्ल ही हैं?"

"अच्छी बात है। अरण्यमल्ल यहीं पर है। तुम लोग इसका राज्याभिषेक करो। हम छत पर जाकर चांदनी में आराम करेंगे।" ये शब्द कहते जीवदत्त अपने अनुचरों के साथ छत पर चला गया।

उसके तुरंत बाद एक आंधी सी उठी, चारों तरफ़ के पेड़-पौधे झूम उठे। आसमान में बादलों के गरजन सी ध्वनि हुई। जीवदत्त के साथ सबने सर उठाकर ऊपर देखा। दूर से काले बादल जैसी कोई चीज़ उनकी ओर बढ़ी चली आ रही थी। आश्चर्य और भय के साथ वे लोग उसकी ओर ताक रहे थे, तभी वह ठीक उनके ऊपर आकर आसमान में रुक गयी। वह मेघ नहीं था, बल्कि बहुत समय पहले पद्मपुर की राजकुमारी पद्मावती ने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को पत्थर का जो शिलारथ दिया था, उसकी आकृति में था वह रथ!

उस रथ में एक यक्ष बैठा था। उस की बगल में राजकुमारी पद्मावती बैठी थी। यक्ष ने गंभीर स्वर में कहा–"हे खड्गवर्मा तथा जीवदत्त! अब तुम लोगों को विन्ध्याचलों में जाकर शिलारथ को हिलाने की जरूरत नहीं है, देखो, उस रथ को हिलाकर आकाश मार्ग में मैं पद्मपुर जा रहा हूं, वहां पर राजकुमारी पद्मवती के साथ विवाह करके मैं अपने नगर को चला जाऊँगा।"

"यह राजकुमारी का अपहरण तो नहीं है? हे राजकुमारी, क्या यक्ष का कहना सत्य है?" जीवदत्त ने ऊंचे स्वर में पूछा।

जीवदत्त के प्रश्न के उत्तर के रूप में यक्ष ज़ोर से हंस पड़ा। शिलारथ तेजी से आगे बढ़ा और देखते देखते आसमान में ओझल हो उठा।

"जीवदत्त! हमारा सारा श्रम व्यर्थ हो गया है!" खड्गवर्मा ने निराश भरे स्वर में कहा।

"हमारा श्रम व्यर्थ नहीं गया है, भाई! हम महावीर साबित करने के हेतु विन्ध्याचल के लिए चल पड़े। रास्ते में जो खतरे उपस्थित हुए, उनका हमने अपने बाहुबल के द्वारा सामना किया और हम सत्य ही महावीर कहलाये! अब चिंता ही क्यों करें?" जीवदत्त ने समझाया।

"तुमने सत्य कहा। हम कुछ दिन इस अरण्यपुर में विश्राम करेंगे। इसके आसपास में हम अगर कोई राज्य स्थापित करें तो कैसे होगा?" खड्गवर्मा ने पूछा।

"ओह! बहुत बढ़िया होगा। हमारा निवास फिलहाल अरण्यपुर में ही। राज्य की स्थापना करने के बारे में इतमीनान से विचार करेंगे।" जीवदत्त ने कहा।

"हे महावीरो! आप लोग जिस राज्य का निर्माण करने जा रहे हैं, उसकी राजधानी के निर्माण का भार मुझे सौंप दीजिये। वास्तु शास्त्र में मैं 'मय' की समता रखता हूँ।" स्वर्णाचारी ने गर्व भरे स्वर में कहा।

"महावीरो, आप तलवार तथा शक्ति के द्वारा जिस पर विजय पा नहीं सकेंगे, उसे मैं कूटनीति से साध सकता हूँ। मैं इस विद्या में शकुनि से कम नहीं हूँ।" विघ्नेश्वर पुजारी ने अपने कौशल का परिचय दिया।

"तुम लोगों की शक्ति और सामर्थ्यों पर मेरा दृढ़ विश्वास है। अब रात काफ़ी बीत चुकी है। हम इस चांदनी में आराम से सो जायेंगे।" ये शब्द कहकर जीवदत्त लेट गया। उसके साथ खड्गवर्मा, विघ्नेश्वर पुजारी और स्वर्णाचारी भी उचित जगह देख लेट गये और आराम से सो गये। (समाप्त)
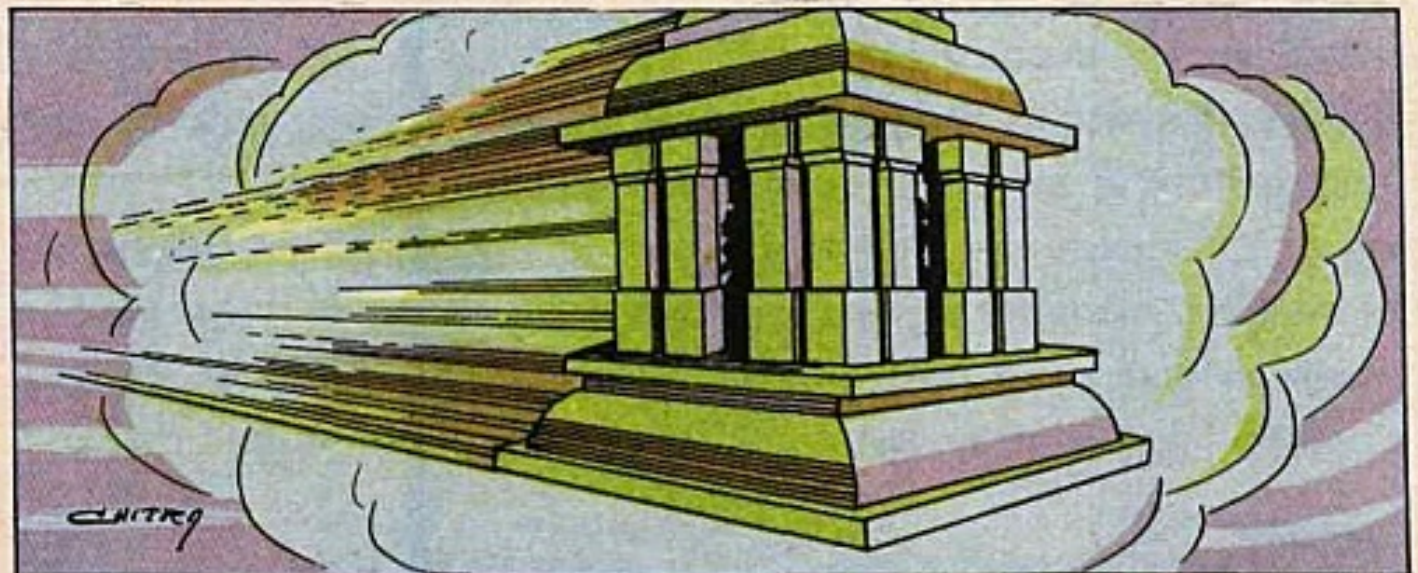
भला-बुरा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुम अपने परिश्रम की चिंता न करो। दुनिया में साधारणत: भले-बुरे मिले ही होते हैं। उदाहरण के रूप में मैं तुम्हें तपती का वृत्तांत सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो!"

बेताल यों कहने लगा: कई शताब्दियों के पूर्व नागपुर में एक विधवा निवास करती थी। उसका नाम तपती था। उसके एक कन्या थी। वह अपनी कन्या के साथ एक खपरैल के मकान में रहती थी। मकान के पिछवाड़े में छोटा-सा बगीचा था। तपती कड़ी मेहनत करती थी। वह अपनी बेटी को जी-जान से प्यार करती थी। उनके दिन आराम से बीत जाते थे।

वेताल कथाएँ

कुछ समय बाद तपती की बेटी आँखों की बीमारी का शिकार हो गयी। उस कन्या की आँखें लाल हो उठीं और वह दर्द से परेशान थी। तपती ने कोई दवा दी, मगर कोई फ़ायदा न हुआ। दूसरे दिन लड़की की आँखें सूझ गयीं। तपती एक दम घबरा गयी। उसने कई वैद्यों के पास जाकर सलाह मांगी। वैद्यों ने जो भी दवा बतायी, सब देती गयी, लेकिन आँखों की बीमारी दूर नहीं हुई। लड़की दर्द के मारे रोती थी, माँ का दिल तड़प उठता था। साथ ही लड़की को अच्छा खाना भी मिलता न था।

तपती की माँ ने सुना कि पास के एक गाँव में एक नाई है जो आँखों की बीमारियों का इलाज करता है। फिर क्या था, तपती अपनी लड़की को लेकर नाई के गाँव की ओर चल पड़ी।

चलते-चलते दुपहर हो गयी। रास्ते में एक जगह पेड़ के नीचे आराम करनेवाली एक बुढ़िया उन्हें दिखाई दी। उस बूढ़ी ने तपती और उसकी बच्ची को निकट बुलाया। बातचीत के दौरान में तपती ने उस बूढ़ी से अपनी लड़की की आँख की बीमारी की बात बतायी।

तपती की बातें सुनकर बूढ़ी ने कहा– "पगली, ऐरे-गैरे वैद्यों से इलाज कराकर बच्ची की आँखों को ख़राब न करना। यहाँ से थोड़ी दूर आगे बढ़ोगी तो दायीं ओर एक पगडंड़ी मिलेगी, उस दिशा में आध घड़ी की यात्रा करोगी तो वहाँ पर तुम्हें एक कुआँ दिखाई देगा। उसका पानी बर्फ़ की भांति ठण्डा होगा। उस पानी से तुम अपनी बेटी की आँखों को धो दोगी तो उसकी आँखें ठीक हो जायेंगी।"

तपती बूढ़ी से विदा लेकर अपनी बेटी के साथ आगे बढ़ी। वे दोनों तीसरे पहर तक कुएँ के पास पहुँचीं।

तपती ने कुएं से पानी निकाला, उस में कपड़ा भिगो कर अपनी बेटी की आँखें पोंछ रही थी। तभी अचानक उसकी बगल में कोई व्यक्ति आ खड़ा हुआ। तपती

ने चौंक कर उसकी ओर देखा। वह मामूली कपड़े पहनें हुये था। पर देखने में वह कोई बड़ा आदमी लगता था।

"तुम्हें देख मैं डर गयी बाबू साहब!" तपती ने कहा।

"बिना आहट किये चला आया, यह तो मेरी भूल थी, पर मैं तुम्हारी बेटी की आँखों की बीमारी की बात सुनकर देवा देने आया हूँ। लो, लकड़ी की यह डिबिया। इसमें लेपन है। इसे तुम अपनी बेटी की आँखों पर मल दो, तो उसकी आँखें पहले जैसी साफ़ दिखाई देने लग जायेंगी।" इन शब्दों के साथ उस व्यक्ति ने तपती के हाथ में डिबिया थमा दी।

तपती ने डिबिया खोलकर देखा। उसके भीतर का लेप हरे रंग का था। उसकी गंध फूलों की खुशबू जैसी थी। तपती ने उस व्यक्ति के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के विचार से सर उठाकर देखा। मगर वह व्यक्ति वहाँ पर न था।

तपती ने संकोच के साथ ही लेपन को अपनी बेटी की आँखों पर मल दिया। थोड़ी देर बाद लड़की ने बताया-"माँ, आँखों का दर्द कम होता जा रहा है।" और थोड़ी देर बाद लड़की आँखें खोल कर साफ़ देखने लगी। अब तपती की

खुशी की सीमा न रही। माँ-बेटी जल्द अपने घर लौट आयीं।

दो-चार दिन तक बूढ़ी अपनी बेटी की आँखों पर लेपन करती रही। धीरे धीरे आँखों का सूजन भी जाता रहा। लड़की अब पूर्ण स्वस्थ थी। इस कारण तपती ने डिबिया को बड़ी सावधानी से छिपा रखा।

थोड़ा समय और बीत गया। एक दिन तपती को लगा कि उसकी बायीं आँख में दर्द हो रहा है। वह यह सोचकर डर गयी कि उसे भी वही बीमारी हो गयी जो कुछ दिन पहले उसकी बेटी को हो गयी थी। लेकिन उसने डिबिये का लेपन मलने से संकोच किया। वह सोचने लगी

पर देखा, अनाज के बोरों के मुँह खोल दिये गये हैं, मगर वहाँ पर उसका मालिक कोई न था। थोड़ी देर बाद उसने देखा कि कोई गेहुए रंग के वस्त्र पहने बोरे में से अनाज निकाल कर अपनी थैली में भर रहा है। उसे आश्चर्य हुआ। उसने पास में खड़ी एक औरत से कहा–"बहन, देखती हो न? वह आदमी चोरी कर रहा है?" इन शब्दों के साथ उसने अपनी उंगली का संकेत भी किया।

पर उस औरत ने पूछा–"तुम किस आदमी की बात करती हो?"

"गेरुए वस्त्र पहने बोरों के पास जो आदमी खड़ा है, वही!" तपती ने कहा।

"अरी, बोरों के पास तो कोई भी आदमी नहीं है। गेहुए वस्त्र पहना आदमी तो आसपास में कहीं है ही नहीं।" औरत ने आश्चर्य में आकर कहा।

इस पर निराश हो तपती ख़ुद चोर के पास गयी, वह व्यक्ति कोई और न था, वही था जिसने उसे कुएँ के पास लेपन की डिबिया दी थी। उसने समझाया–"महाशय, आपको ऐसा काम करना शोभा नहीं देता। आपके पास पैसे न हों तो मैं दे देती हूँ। लेते जाइये। एक बार आपने मेरी मदद की है, इस बार मैं आपकी मदद करूँगी।"

कि अजनबी ने वह दवा केवल अपनी बेटी के वास्ते ही दी हो, और उसका प्रयोग अपने लिए करना उचित न हो, लेकिन उसकी आँख का दर्द बढ़ता ही गया।

इसलिए तपती ने सोचा–"उस अजनबी ने तो मुझसे यह नहीं कहा था कि तुम्हारी बेटी को छोड़ कोई इसका प्रयोग नहीं कर सकते। इसके मलने से नुक़सान ही क्या होगा? यह सोचकर तपती ने वह लेपन अपनी बायीं आँख पर मल दिया। इससे उसका फ़ायदा ही हुआ। दो-चार दिनों में तो उसकी आँख बिलकुल ठीक हो गयी।

दो-चार महीने और बीत गये। एक दिन तपती हाट में गयी। उसने एक मोड़

उस आदमी ने झट सर उठाकर तपती की ओर देखा और धीरे से पूछा–"इस वक़्त तुम किस आँख से मुझे देखती हो?"

तपती ने एक के बाद एक आँख बन्दकर खोल दी और भोलेपन में आकर कहा–"महाशय, आपको मैं अपनी दायीं आँख से देखती हूँ।"

तुरंत उस व्यक्ति ने तपती की बायीं आँख में फूंक लगायी और गायब हो गया। तपती ने अपनी बायीं आँख बन्द करके खोल दी तो उसकी दृष्टि जाती रही।

फिर भी तपती इस बात पर पछतायी नहीं। उसने कभी लेपन की डिबिया को भी नहीं खोला।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा–"राजन, तपती ने उस आदमी को क्यों डांट बतायी जिसने उसका उपकार किया था? उसकी गलती को वह क्यों क्षमा नहीं कर पायी? क्या वह विवेकशीला न थी? या उसके उपकार को भूल गयी थी? उसने उस लेपन का भी उपयोग क्यों नहीं किया? इन प्रश्नों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"लेपन देनेवाले ने तपती की सहायता जरूर की है, मगर सहायता पाकर भले-बुरे का ख्याल न रखना स्वार्थ कहलाता है। तपती में कोई ऐसा स्वार्थ न था। वह कोई भी काम करती तो औचित्य का ख्याल रखती थी, इसीलिए वह उसे पैसे देने के लिए तैयार हो गयी। उसने जिस बात को धर्म समझा, वही काम किया। इस प्रयत्न में वह अंधी या कानी बन जाय तो भी वह चिंता नहीं करती। अधर्म करनेवाले व्यक्ति से सहायता पाना उचित न था, इसीलिए उसने फिर से उस लेपन का उपयोग नहीं किया। अतः तपती के व्यवहार में कोई दोष नहीं है।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

धोबी की पत्नी

एक गांव में एक धोबी था। उसकी औरत बड़ी हठीली थी। एक दिन पति-पत्नी कपड़े धोने नदी पर पहुँचे। रोज वे जहाँ कपड़े धोते थे, वहाँ पर धारा तेज थी, इसलिए धोबी ने अपनी औरत को समझाया–"आज यहाँ पर धारा तेज है, दूसरी जगह जायेंगे।"

मगर धोबी की पत्नी हठी थी, वहीं पर नदी में उतरकर बह गयी और मर भी गयी। इसके बाद वह पिशाचिनी बनकर एक और धोबिन में प्रवेश कर गयी। ओझाओं ने बहुत कोशिश की, लेकिन वे उस पिशाचिनी को भगा नहीं पाये।

यह बात जब धोबी को मालूम हो गयी, तब उसने उस धोबिन के माँ-बाप के पास जाकर बताया–"मैं उस पिशाचिनी को भगा देता हूँ, मुझे दो मिनट उस लड़की से बात करने दो।" लड़की के माँ-बाप ने मान लिया।

धोबी ने उस लड़की के पास जाकर उसके कान में गुप्त रूप से कहा–"अरी, तुम जिस लड़की में प्रवेश कर गयी हो, यह जगह अच्छी है। तुम इसे छोड़कर और कहीं मत जाओ, समझी?"

तुरंत वह पिशाचिनी उस लड़की को छोड़कर भाग गयी। उस लड़की का विवाह धोबी के साथ हो गया।

एक गाँव में एक गरीब औरत थी। किशन नामक उसके एक लड़का था। वह बड़ा ही नटखट था। उसकी माँ ने उसे किसी अमीर के घर नौकर रखना चाहा, मगर उसने साफ़ बताया कि मैं किसी के यहाँ नौकरी नहीं करूँगा।

उस गरीब औरत के घर में दो मादा बतख, एक नर बतख और सोलह बच्चे भी थे। किशन को उन्हें चराने में बड़ा मजा आता था। एक दिन वह अपनी माँ से यह कहकर घर से चल पड़ा कि शहर में जाकर बतखों के बच्चों को बेच आऊँगा।

किशन जब बतखों के बच्चों के साथ वहाँ पहुँचा तब रविदास नामक एक अमीर ने उसके पास आकर पूछा–"कहो भैया! ये बतख कैसे बेचते हो?"

"एक जोड़ा दो चांदी के सिक्कों में बेचता हूँ।" किशन ने जवाब दिया।

रविदास शहर का सबसे बड़ा धनी था। सारे शहर में उसकी धाक जमी थी। उसने किशन से कहा–"अरे कमबख्त! तुम मेरे साथ सौदा करते हो? एक जोड़े के दो पीतल के सिक्के दूँगा।"

"मैंने कहा था न कि दो चाँदी के सिक्कों पर ही बेचूँगा।" किशन ने डटकर जवाब दिया।

"इस कमबख्त को मेरे घर पकड़ लाओ। इन बतखों को भी हांक लाओ।" रविदास ने अपने नौकरों को आदेश दिया। नौकर किशन को रविदास के घर खींच ले गये और अपने मालिक के आदेश पर उसे इमली की बेंत से पच्चीस मार जमा दी।

मार खाने पर किशन का अहँ जाग उठा, उसने कहा–"इससे तीन गुने मैं तुमसे वसूल नहीं कर पाया तो मेरा नाम किशन नहीं।" इसपर रविदास और नाराज़ हो

रामनाथ अवस्थी
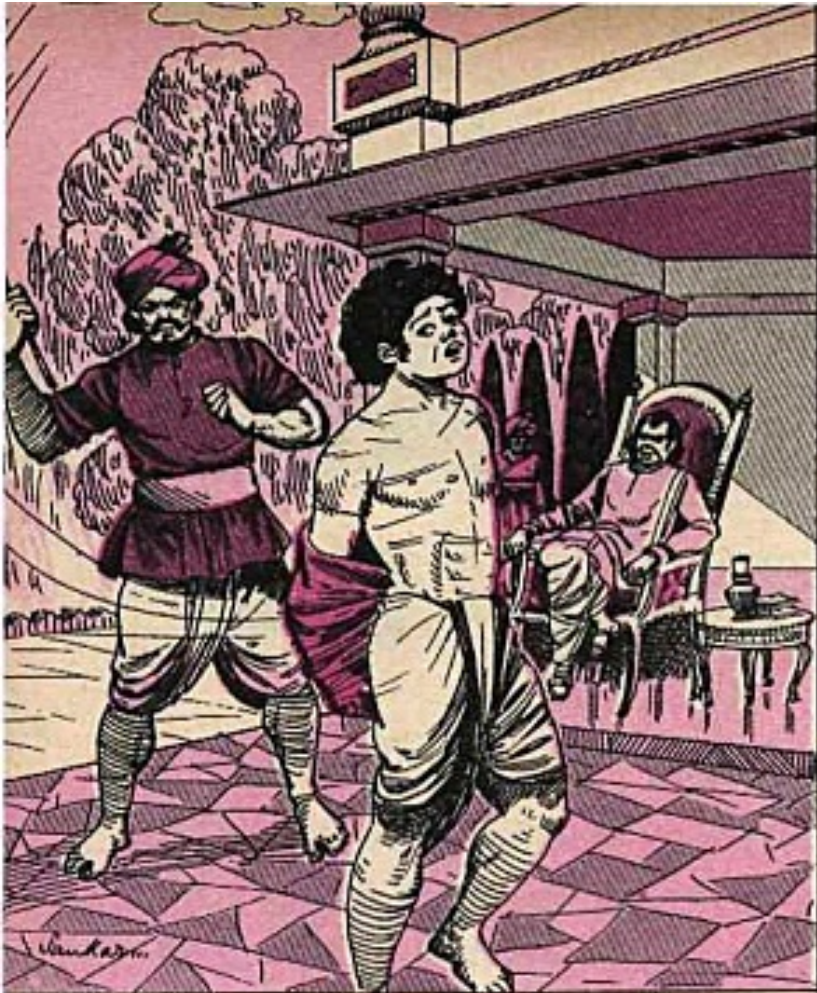
उठा, फिर किशन को तीस बेंत की मार जमवा दी, तब उसे घर भेज दिया ।

इसके बाद किशन कई साल तक गाँवों में घूमते अपने दिन काटने लगा । वह अब पच्चीस-तीस साल का हो गया था । लेकिन रविदास के प्रति उसका क्रोध बढ़ता गया ।

कुछ समय बाद वह रविदास के शहर में लौट आया । उसने सुना कि रविदास महल बनवा रहा है । तुरंत किशन ने बढ़ई का वेष बनाया और मकान की जगह पहुँचकर लकड़ी की जांच करने लगा ।

रविदास ने किशन को देखा । उसके निकट जाकर पूछा–"तुम कौन हो ? क्या लकड़ी के बारे में जानकारी रखते हो ?"

"मैं दूर देश का बढ़ई हूँ । मैं लकड़ी के बारे में अच्छी जानकारी रखता हूँ ।" किशन ने जवाब दिया ।

"क्या इस मकान के लिए यह लकड़ी उचित होगी ?" रविदास ने पूछा ।

"मकान को बढ़िया बनाना है तो यह लकड़ी ठीक न होगी ।" किशन ने कहा ।

रविदास थोड़ी देर सोचता रहा और बोला–"मेरे अधीन में एक जंगल है । मेरे साथ वहाँ पर चलो, काम की लकड़ी के पेड़ तुम ही चुन लो ।"

वे दोनों लकड़हारों को साथ ले जंगल में जा पहुँचे । किशन ने कुछ अच्छे पेड़ों को चुन लिया, लकड़हारों को उन्हें काटने का आदेश दिया । तब रविदास को साथ ले जंगल के बीच चला गया । निर्जन प्रदेश में रविदास को एक पेड़ दिखा कर किशन ने कहा–"यह पेड़ बहुत ही बढ़िया है । देखें, इसका घेरा कितना है, माप तो लो ।"

रविदास अपने दोनों हाथ बढ़ाकर पेड़ को मापने लगा । तुरंत किशन ने एक फंदा निकाल कर रविदास के दोनों हाथों को बांध दिया । इसके बाद उसने पेड़ से एक छड़ी तोड़ दी और जी भर कर रविदास को पीटा । तब रविदास की जेब में से बटुआ निकाला, उस में से अपने बतख़ों का मूल्य लेकर कहा–"मैं बढ़ई नहीं हूँ रविदास ! बतखोंवाला

"पहले पैसे तो दो।" मुंशी ने पूछा।

"रेशमी रूई का ही बिस्तर लगा दो।" केशवदास ने कहा।

इस पर मुंशी बाहर आया और उसने नौकर से कहा–"अबे, उस बहरे को सराय से बाहर निकाल दो! वह इसे अपने बाप की संपत्ति समझ बैठा है।"

नौकर और मुंशी ने भीतर जाकर देखा कि केशवदास किसी दूसरे के लिए लगाये गये बिस्तर पर लेटकर खुर्राटे ले रहा है।

नौकर ने केशवदास को झकझोरते हुए उठाया। केशवदास ने धीरे से आँखें खोलते हुए पूछा–"क्या बात है, बे?"

"पहले सराय से बाहर चले जाओ।" मुंशी जोर से चिल्ला पड़ा।

"यह बिस्तर मुझे अच्छा लगता है। मैं इसी पर सो जाऊँगा।" केशवदास ने कहा।

"अरे, इसको बाहर घसीटते क्यों नहीं?" मुंशी चिल्ला रहा था और उधर नौकर केशवदास के साथ खींचा-तानी कर रहा था। इतने में गाँव के बुजुर्गों ने सराय में पहुँच कर पूछा–"सुनते हैं कि राजा के बहनोई आ गये हैं, कहाँ पर हैं?"

"महाशय, राजा के बहनोई की बात भगवान जाने, मगर इस रात्रि के समय मुझे पैसे न देने के कारण ये लोग सराय से बाहर घसीट रहे हैं।" इन शब्दों के साथ केशवदास ने उन बुजुर्गों को सराय की सारी कहानी सुनायी।

बुजुर्गों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन लोगों ने सराय में ठहरे अन्य मुसाफ़िरों से पूछ-ताछ की तो उन सब ने बताया कि नौकर, मिसरानी और मुंशी ने उनसे पैसे वसूल किये हैं।

इसके बाद वहाँ पर पंचायत बैठी। यह साबित हुआ कि तीनों कर्मचारियों ने यात्रियों से कस करके धन वसूल किया है। गाँव के बुजुर्गों ने उन तीनों कर्मचारियों को जुर्माना लगाया। उन्हें काम से हटा कर नये कर्मचारियों को नियुक्त किया। इसके बाद बुजुर्गों ने बारी-बारी से सराय का प्रबंध देखने का निर्णय किया।

मूर्ख चोर

एक ब्राह्मण किसी दूसरे गाँव से अपने गाँव जा रहा था। रास्ते में अंधेरा फैल गया। ब्राह्मण अकेला था और उस रास्ते में कोई दूसरा यात्री न था, इसलिए वह डरते-डरते आगे बढ़ा चल जा रहा था।

एक जगह चार चोरों ने उसे रोका और उसकी सारी संपत्ति मांगी।

ब्राह्मण के पास सोने के दो गहने और कुछ रुपये भी थे। अगर ब्राह्मण सोना और रुपये देने से इनकार कर दे तो चोर उसकी जान लेने के लिए भी तैयार हो गये थे।

ब्राह्मण ने अपनी थैली खोल दी और चोरों को गहने तथा रुपये दिखाते हुए कहा—"चोरी का माल चोरों के हाथ जा रहा है, ले लो।"

"क्या यह चोरी का माल है?" चोरों ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"हाँ तो! यहाँ से दो मील के फ़ासले पर दो-तीन चोर बरातियों की गाड़ियों को लूट रहे थे। मैंने दूर से देखा। इस पर मेरे हाथ ये गहने और रुपये देते हुए बोले, तुम इन्हें ले जाओ, पर यह बात किसी से मत कहो।"

यह बात सुनते ही चोरों ने ब्राह्मण के हाथ से सोना और रुपये छीनना छोड़ दिया और उस दिशा में भाग गये जिस दिशा में चोरों के लूटने का संकेत ब्राह्मण ने किया। फिर क्या था, ब्राह्मण को मौक़ा मिला, वह जल्दी जल्दी चलकर अपने गाँव पहुँच गया।

[४]

दूसरे दिन अबू सीर ने सारे शहर में ढिंढोरा पिटवाया कि शहर के लोग राजा के हमाम में नहा सकते हैं और तीन दिन तक किसी से शुल्क वसूल नहीं किया जायगा। फिर क्या था, हमाम के पास लोगों की भीड़ लग गयी। तीन दिन तक अबू सीर ने किसी से शुल्क वसूल नहीं किया। चौथे दिन वह हमाम के दर्वाजे के पास एक हुंडी रखे बैठा रहा। नहाकर लौटते वक़्त जो जितना दे उतना ख़ुशी से ले लेता था। शाम के होते होते उसकी हुंडी भर गयी। इस तरह वह थोड़े दिनों में बड़ा अमीर बन बैठा।

हमाम के खोलने के कुछ दिन बाद राजा के द्वारा हमाम की तारीफ़ सुनकर रानी ने भी हमाम में जाकर नहाना चाहा। यह खबर मिलते ही अबू सीर ने हमाम में सुबह पुरुषों के लिए तथा शाम को महिलाओं के नहाने का प्रबंध किया। औरतों के द्वारा दिये जानेवाले पैसे वसूलने के लिए अबू सीर ने एक अच्छे घराने की औरत को नियुक्त किया।

रानी एक बार नहाकर हमाम के सुख से तृप्त हुई और उसने हर शुक्रवार को हमाम में जाकर नहाने का निर्णय किया। राजा हर शुक्रवार को सुबह आकर हमाम में नहाता और एक हज़ार दीनार दे जाता, उसी प्रकार हर शुक्रवार की शाम को रानी नहाकर एक हज़ार दीनार दे जाती।

इस तरह अबू सीर की संपत्ति और यश भी बढ़ते गये। मगर वह पहले जैसा विनयशील बना रहा। उसके व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया। वह हमेशा प्रसन्न रहा करता था। गरीबों के प्रति वह रहम

रखता था और उनसे कभी पैसे वसूल नहीं करता था। उसके भलेपन ने ही उसकी रक्षा की। यह कहानी हम आगे बतायेंगे।

अबू सीर के हमाम के बारे में रंगरेज अबू कीर ने भी सुना। क्योंकि सब लोग उस हमाम को भूलोक का स्वर्ग बताकर उसकी तारीफ़ करते थे। अबू कीर ने भी नहाने का सुख भोगना चाहा। बढ़िया वस्त्र पहने खच्चर पर सवार हो नौकरों के साथ नहाने के लिए चल पड़ा।

हमाम में क़दम रखते ही अबूकीर को अगरबत्ती और चन्दन की महक़ आयी, लोगों की भारी भीड़ भीतर जाती और बाहर लौट आती थी। उसका पुराना मित्र हुंडी के पास बैठे मुस्कुराते हुए अबू कीर को दिखाई पड़ा। अबू सीर अब मोटा-ताजा हो गया था, इसलिए अबू कीर उसे झट पहचान नहीं पाया। उसे पहचानने पर अबू कीर के मन में अबू सीर के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गयी। फिर भी उसने खुशी का अभिनय करते अबू सीर के पास जाकर कहा-"भैया, तुमने यह क्या किया? क्या एक मित्र दूसरे मित्र को कहीं भूल सकता है? यह तो बुद्धिमानों का काम नहीं है। क्या तुम यह नहीं जानते कि इस शहर में मैं दरबारी रंगरेज बनकर बैठा हूँ। तुम मुझे देखने क्यों नहीं आये? तुमने क्या अपने पुराने दोस्त की खबर तक की? मैंने तुम्हारे वास्ते अपने नौकरों को भेजकर सारा शहर ढुंढ़वाया, पर कहीं तुम्हारा पता न लगा।"

अबू सीर चिंता के साथ सर हिलाते हुए बोला-"अबू कीर, जब मैं तुम्हारी दुकान पर आया तब तुमने मेरा अपमान किया, पिटवाया, और मुझे चोर बताकर भगा दिया? क्या ये सारी बातें तुम भूल गये?"

अबू कीर आश्चर्य का अभिनय करते बोला-"यह तुम क्या कहते हो? मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने तुमको नहीं पीटा! मैंने तुमको कभी देखा तक नहीं और न पहचाना ही। एक कमबख्त चोर मेरी

[४]

दूसरे दिन अबू सीर ने सारे शहर में ढिंढोरा पिटवाया कि शहर के लोग राजा के हमाम में नहा सकते हैं और तीन दिन तक किसी से शुल्क वसूल नहीं किया जायगा। फिर क्या था, हमाम के पास लोगों की भीड़ लग गयी। तीन दिन तक अबू सीर ने किसी से शुल्क वसूल नहीं किया। चौथे दिन वह हमाम के दर्वाजे के पास एक हुंडी रखे बैठा रहा। नहाकर लौटते वक्त जो जितना दे उतना खुशी से ले लेता था। शाम के होते होते उसकी हुंडी भर गयी। इस तरह वह थोड़े दिनों में बड़ा अमीर बन बैठा।

हमाम के खोलने के कुछ दिन बाद राजा के द्वारा हमाम की तारीफ़ सुनकर रानी ने भी हमाम में जाकर नहाना चाहा। यह खबर मिलते ही अबू सीर ने हमाम में सुबह पुरुषों के लिए तथा शाम को महिलाओं के नहाने का प्रबंध किया। औरतों के द्वारा दिये जानेवाले पैसे वसूलने के लिए अबू सीर ने एक अच्छे घराने की औरत को नियुक्त किया।

रानी एक बार नहाकर हमाम के सुख से तृप्त हुई और उसने हर शुक्रवार को हमाम में जाकर नहाने का निर्णय किया। राजा हर शुक्रवार को सुबह आकर हमाम में नहाता और एक हज़ार दीनार दे जाता, उसी प्रकार हर शुक्रवार की शाम को रानी नहाकर एक हज़ार दीनार दे जाती।

इस तरह अबू सीर की संपत्ति और यश भी बढ़ते गये। मगर वह पहले जैसा विनयशील बना रहा। उसके व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया। वह हमेशा प्रसन्न रहा करता था। गरीबों के प्रति वह रहम

रखता था और उनसे कभी पैसे वसूल नहीं करता था। उसके भलेपन ने ही उसकी रक्षा की। यह कहानी हम आगे बतायेंगे।

अबू सीर के हमाम के बारे में रंगरेज अबू कीर ने भी सुना। क्योंकि सब लोग उस हमाम को भूलोक का स्वर्ग बताकर उसकी तारीफ़ करते थे। अबू कीर ने भी नहाने का सुख भोगना चाहा। बढ़िया वस्त्र पहने खच्चर पर सवार हो नौकरों के साथ नहाने के लिए चल पड़ा।

हमाम में क़दम रखते ही अबूकीर को अगरबत्ती और चन्दन की महक आयी, लोगों की भारी भीड़ भीतर जाती और बाहर लौट आती थी। उसका पुराना मित्र हुंडी के पास बैठे मुस्कुराते हुए अबू कीर को दिखाई पड़ा। अबू सीर अब मोटा-ताजा हो गया था, इसलिए अबू कीर उसे झट पहचान नहीं पाया। उसे पहचानने पर अबू कीर के मन में अबू सीर के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गयी। फिर भी उसने खुशी का अभिनय करते अबू सीर के पास जाकर कहा—"भैया, तुमने यह क्या किया? क्या एक मित्र दूसरे मित्र को कहीं भूल सकता है? यह तो बुद्धिमानों का काम नहीं है। क्या तुम यह नहीं जानते कि इस शहर में मैं दरबारी रंगरेज बनकर बैठा हूँ। तुम मुझे देखने क्यों नहीं आये? तुमने क्या अपने पुराने दोस्त की खबर तक की? मैंने तुम्हारे वास्ते अपने नौकरों को भेजकर सारा शहर ढुंढ़वाया, पर कहीं तुम्हारा पता न लगा।"

अबू सीर चिंता के साथ सर हिलाते हुए बोला—"अबू कीर, जब मैं तुम्हारी दुकान पर आया तब तुमने मेरा अपमान किया, पिटवाया, और मुझे चोर बताकर भगा दिया? क्या ये सारी बातें तुम भूल गये?"

अबू कीर आश्चर्य का अभिनय करते बोला—"यह तुम क्या कहते हो? मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने तुमको नहीं पीटा! मैंने तुमको कभी देखा तक नहीं और न पहचाना ही। एक कमबख्त चोर मेरी

दूकान में कपड़े चुराने के लिए आया था, तुम्हें देख मैंने उसीको समझा। तुम उस वक़्त इस तरह क़मज़ोर हो गये थे कि मैं तुम्हें पहचान नहीं सका। यह सब अल्लाह की महिमा है! फिर भी इसमें गलती तुम्हारी ही है। मुझे देखते ही तुम्हें अपना नाम कहना चाहिये था। उल्टे मैं उस दिन गुस्से में था। तुम मुझे माफ़ कर दो।"

"अच्छी बात है! जो हुआ, सो हो गया, अन्दर आकर नहाओ तो सही।" अबू सीर ने अबू कीर से कहा।

"भाई साहब! तुम इस हालत तक कैसे पहुँचे?" अबू कीर ने पूछा।

"तुमको जिसने ऊपर उठाया, उसीने मुझे भी ऊपर उठाया।" इन शब्दों के साथ अबू सीर ने अपनी सारी कहानी कह सुनायी।

अबू कीर ने सारी कहानी सुनकर कहा— "क्या ही अच्छा हुआ कि तुम पर राजा का अनुग्रह हुआ है। तुम राजा से यह कहो कि मैं तुम्हारा दोस्त हूँ, तो उनका अनुग्रह तुम पर दुगुना हो जायगा।"

"भाई, हम लोग क्या कर सकते हैं? निग्रह और अनुग्रह सब अल्लाह के हाथों में हैं। तुम जल्दी नहा लो।" अबू सीर ने कहा। इसके बाद अबू सीर ने ख़ुद अबू कीर का मालिश किया, उसके पीने के लिए
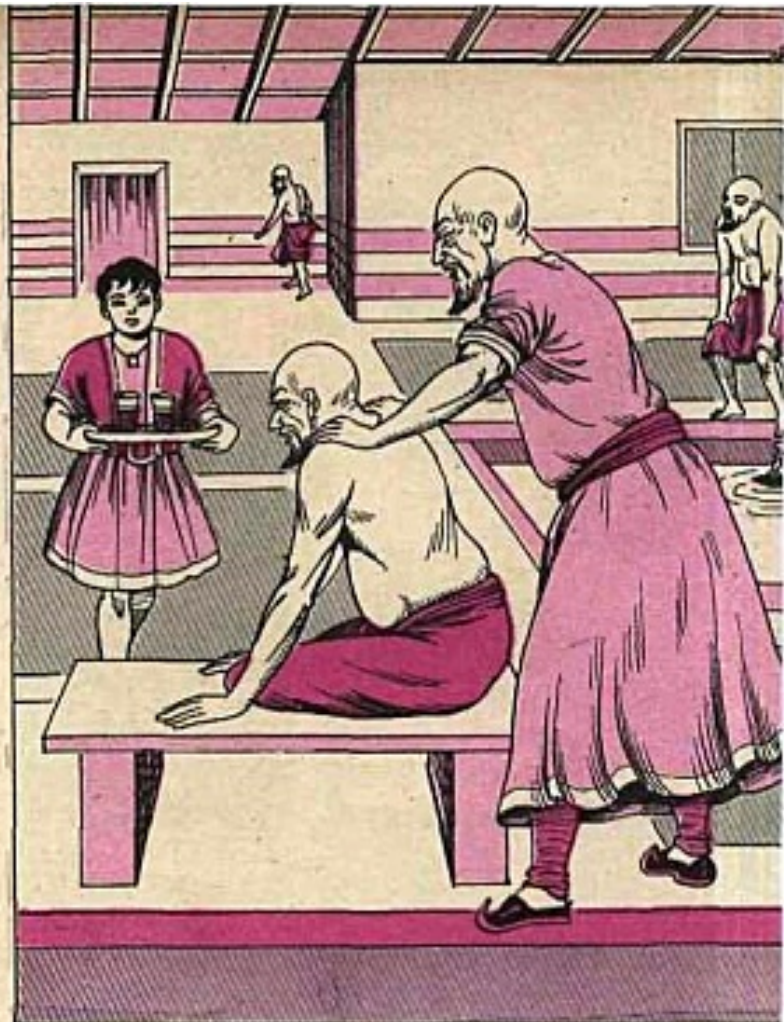
शरबत दी, यह आदर अबू सीर सिर्फ़ राजा के लिए ही करता है। इसलिए नहानेवाले और लोग रंगरेज के साथ होनेवाला आदर देख चकित रह गये।

हमाम से लौटते वक़्त अबू कीर ने अबू सीर को पैसे देना चाहा। लेकिन अबू सीर ने इनकार करते हुये कहा—"अरे भाई, तुम क्या सोच कर मुझे पैसे देते हो? दो दोस्तों के बीच यह फ़रक़ कैसा?'

"अच्छी बात! तुम्हारी, जो इच्छा! तुमने मेरे प्रति आदर दिखाया इसलिए तुम्हें मैं एक सलाह देता हूँ। तुम्हारा हमाम सब तरह से सुंदर है, मगर यहाँ पर बाल झड़नेवाले उबटन की कमी खटकती

है। जानते हो, वह कैसे तैयार किया जाता है? चूने में संखिया मिलाकर पीस दो, फिर उसमें तेल मिलाकर उसका ढेला बना दो। उसकी दुर्गंध को दूर करने के लिए कस्तूरी मिला दो। उस उबटन के साथ तुम राजा को नहलवा दो तो वे बहुत प्रसन्न हो जायेंगे। उबटन लगने से शरीर चिकना और साफ़ हो चमकने लगता है।" अबू कीर ने उपाय बताया।

अबू सीर ने सारा विवरण लिख कर अबू कीर को विदा किया। अबू कीर सीधे राजा के पास पहुँचा और घबराहट का अभिनय करते बोला—"महाराज, आप को एक खास चेतावनी देने आया हूँ।"

"कैसी चेतावनी है?" राजा ने पूछा।
"अल्लाह की आप पर मेहर्बानी रही, इसीलिए एक भयंकर दुश्मन आज तक आपकी हानि नहीं कर पाया। अबू सीर आपके प्राण और राज्य को हरने का षड़यंत्र करने जा रहा है!" अबू कीर ने कहा।

"वह कैसा षड़यंत्र है? साफ़ साफ़ बता दो!" राजा ने पूछा।

"महाराज! इस बार आप नहाने के लिए हमाम में जायेंगे तो जान से लौट नहीं सकते।" अबू कीर ने समझाया।

"किसलिये, क्यों?" राजा ने पूछा। अबू कीर कांपने का अभिनय करते बोला—"ज़हर! संखिया और चूना मिलाकर उसका उबटन आबू सीर आपके शरीर पर मलने जा रहा है। वह आप से कहेगा कि उस उबटन से आपके शरीर के रोम झड़ जायेंगे और आपका शरीर चिकना हो चमकेगा! मगर उस उबटन के शरीर पर लगते ही जलन पैदा होगी। इससे बढ़कर भयंकर मौत दूसरी नहीं हो सकती। वह शत्रु राजा का गुप्तचर है। आपके प्राण हरने के लिए शत्रु राजा ने उसे भेजा है। मैं आपका नमक खा चुका हूँ, खाता हूँ। इसलिए यह खबर लगते ही मैं आपको चेतावनी देने दौड़े-दौड़े आया हूँ।"

अबू कीर ने जो झूठ कहा, उस पर न केवल राजा का विश्वास जम गया, बल्कि उसका कलेजा भी कांप उठा। उसने अबू कीर से कहा–"तुम यह बात गुप्त रखो। मैं अभी मंत्री को साथ लेकर हमाम में जाता हूँ और इसका पता लगा लेता हूँ कि तुमने जो कुछ कहा, वह सही है या नहीं।"

राजा जब मंत्री को साथ ले हमाम में पहुँचा तब अबू सीर राजा को नहलाने के लिए तैयार हो गया। मगर राजा ने पहले मंत्री को नहलाने का आदेश दिया।

मंत्री के नहाने के बाद अबू सीर ने राजा से कहा–"महाराज, मैंने एक नये क़िस्म का उबटन तैयार किया है। उससे रोम बड़ी सरलता से झड़ जाते हैं। उस्तरे से हजामत करने की जरूरत नहीं होती। यह उबटन मैंने खास कर आपके लिए तैयार किया है।"

"देखें तो सही, उसका प्रयोग तुम मंत्री पर कर दो।" राजा ने कहा।

अबू सीर ने उस उबटन को मंत्री के पैर पर मल दिया, तुरंत जहाँ-जहाँ उबटन लगा था, वहाँ के रोम झर गये।

उसे देखते ही राजा के मन में यह विश्वास हो गया कि वह उबटन बड़ा ही जहरीला है। तुरंत उसने अपने नौकरों से कहा–"इस हत्यारे को बन्दी बना दो।"

इसके बाद राजा, मंत्री और नौकरों के साथ अबू सीर राज महल में आये। अबू सीर की समझ में नहीं आया कि उसे राजा ने बन्दी क्यों बनाया?

थोड़ी देर बाद राजा ने बन्दरगाह के अधिकारी को बुलाकर आदेश दिया–"तुम इस राजद्रोही को ले जाकर जलाये गये चूने के पत्थरों के साथ बोरे में बाँधकर इस तरह समुद्र में फेंक दो, जिसमे मैं अपने महल की खिड़की में से उस दृश्य को देख सकूं! ऐसा करने से आग और पानी के साथ इसकी मौत हो जायगी।"

"जी महाराज! जो आज्ञा!" यह कहकर बन्दरगाह का अधिकारी अबू सीर

को एक डोंगी पर चढ़ाकर समुद्र पर चल पड़ा।

बन्दरगाह का अधिकारी कुछ समय पहले एक जहाज़ का मल्लाह था। उस वक़्त एक दिन वह हमाम में नहाने गया था। उसके पास पैसे न थे, फिर भी अबू सीर ने मुफ़्त में ही उसे अच्छी तरह से नहलवाकर भेजा था। इसलिए बंदरगाह का अधिकारी अबू सीर के व्यवहार से प्रभावित हो गया था। इस उपकार का बदला चुकाने के ख्याल से अबू सीर को वह एक टापू में ले गया और बोला– "भैया, मैं तुम्हारे उपकार को भूल नहीं सकता। बदले में मैं तुम्हारा उपकार करना चाहता हूँ। लेकिन यह बताओ कि तुमने राजा के प्रति कैसा द्रोह किया जिससे तुम्हें इस भयंकर मौत की सजा मिली?"

"भाई साहब! अल्लाह की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने कोई अपराध नहीं किया है। मैं यह बिलकुल नहीं जानता कि मुझे यह सज़ा क्यों दी गयी?" अबू सीर ने कहा।

"तब तो तुम्हारे कोई दुश्मन राजा से झूठ बोला होगा। जो यश पाता है, उसके दुश्मनों की कमी नहीं होती! तुम इस टापू पर रह जाओ। तुम्हें किसी तरह का ख़तरा न होगा। मछलियाँ पकड़ते रहो तो तुम्हारा समय भी कट जायगा। इस बीच में तुम्हें तुम्हारे देश भेजने का
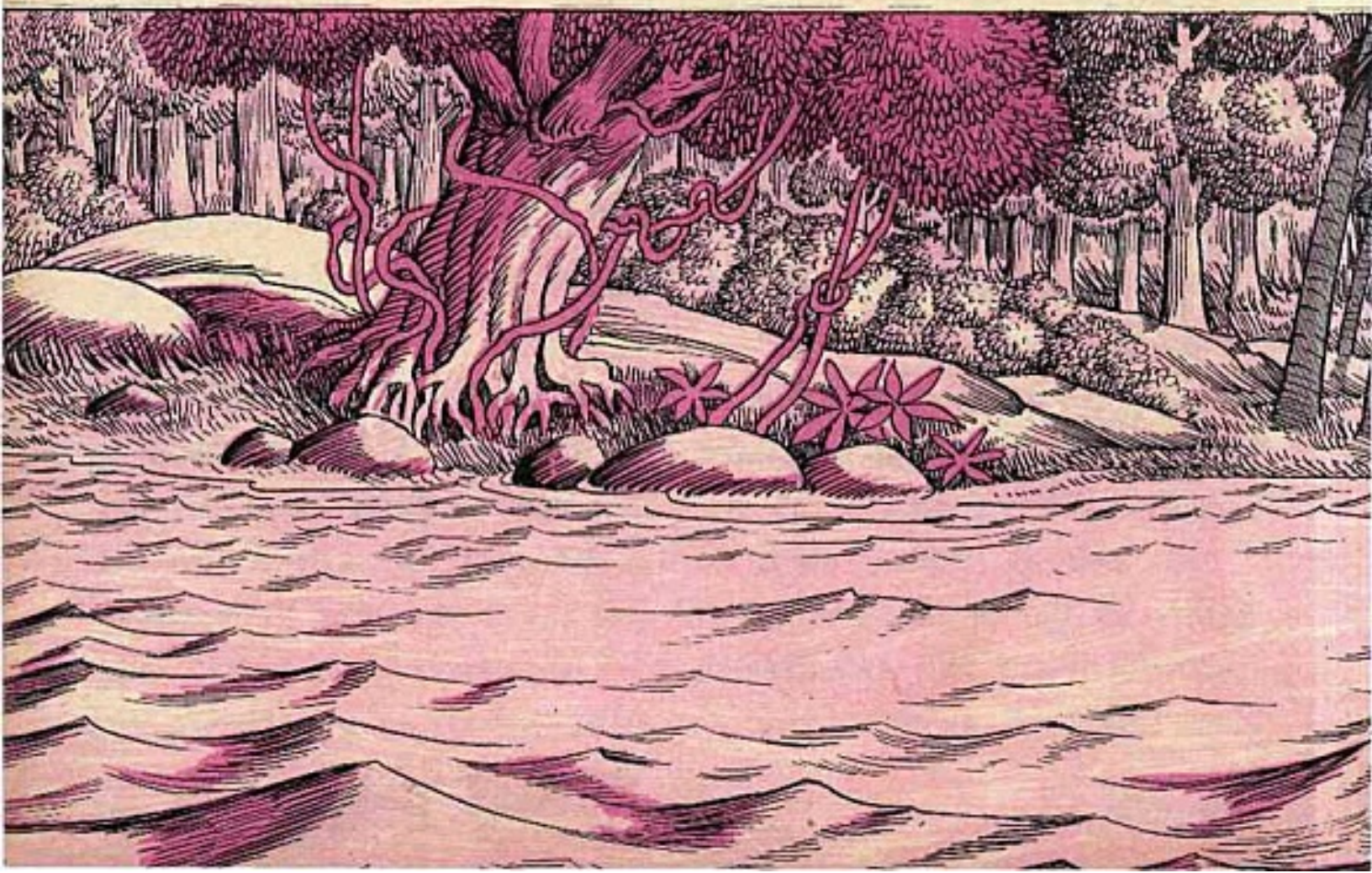
कोई उपाय सोचूंगा।" बन्दरगाह के अधिकारी ने समझाया।

इसके बाद उसने एक बोरे में जलाये गये चूने के पत्थर भर दिये, डोंगी पर समुद्र में गया, राजमहल की खिड़की के सामने डोंगी को रोका। राजा ने जब हाथ हिलाकर संकेत किया तब उसने बोरे को समुद्र में फेंक दिया।

मगर राजा ने जब हाथ हिलाया, तब उसकी उंगली की अंगूठी फिसल कर समुद्र में जा गिरी। उस देश के निवासियों का यह विश्वास था कि राजा की वह अंगूठी अद्भुत शक्तियाँ रखती है। उसकी ऐसी महिमा है, जो भी राजा का सामना करेगा, वह भस्म हो जायगा। यदि लोगों को यह मालूम हो जाय कि वह अंगूठी खो गयी है तो जनता का राजा पर से विश्वास उठ जायगा। इसलिए राजा ने यह बात किसी से न कही, बल्कि गुप्त रखी। उधर टापू पर अबू सीर अकेला रह गया। उसे बन्दरगाह के अधिकारी ने एक जाल दिया, उस जाल को लेकर अबू सीर मछली पकड़ने गया। मछलियाँ पकड़ने से एक तो उसकी भूख मिट जाती थी और दूसरी बात वह अपने एकांत को भूल जाता था।

अबू सीर ने ज्यों ही पानी में जाल फेंका, त्यों ही उसमें अनेक रंगबिरंगी मछलियाँ फँस गयीं। अबू सीर के मछली खाये काफी समय हो चुका था, उसने

सोचा कि ये मछलियाँ बंदरगाह के अधिकारी के द्वारा पकवा कर खाया जाय।

उधर रोज़ समुद्र में मछलियाँ पकड़वाकर दो रसोइयों के द्वारा पकवाने और उन्हें राजा के पास भेजने का काम बन्दरगाह के अधिकारी का था। उस दिन वह किसी काम में फँस गया था, वरना उस जाल से बन्दरगाह का अधिकारी खुद मछलियाँ पकड़ता, मगर उस दिन उस अधिकारी की ओर से अबू सीर ने जाल फेंका था।

अबू सीर ने जाल में फँसी बड़ी मछली को चुन कर उसे अपने लिए पकवाना चाहा, यह सोच कर उसने चाकू से मछली को काटा। उसने मछली के पेट से चाकू निकाला तो देखा कि उस की नोक पर एक सोने की अंगूठी चमक रही है। वह राजा के खोई हुई अंगूठी थी। यह बात अबू सीर को मालूम न थी। इसलिए उसने उसे अपनी उंगुली में पहनायी।

थोड़ी देर बाद बन्दरगाह का अधिकारी वहाँ पर आया और अबू सीर की उंगली में अंगूठी देख चकित रह गया। उस ने अबू सीर से पता लगाया कि वह उसे कैसे प्राप्त हो गयी है। तब वह बोला—"भैया! किसकी क़िस्मत कैसी है? बता नहीं सकते, तुम इस अंगूठी के ज़रिये राजा के सामने पहुँच सकते हो, तुम्हें कोई उसके पास जाने से रोक नहीं सकेगा। तुम्हारी उंगली में अंगूठी देख राजा तुम्हारे सामने भीगी बिल्ली बन जायगा।"

अधिकारी की सलाह पाकर अबू सीर राज महल में गया। उस वक़्त राजा दरबार में था। उसने अबू सीर को देख पूछा—"तुम तो मेरी आँखों के सामने समुद्र में गिरा दिये गये। फिर कैसे जी उठे?"

अबू सीर ने राजा को सारी कहानी सुनायी और कहा—"महाराज! आपने मेरे प्रति जो अनुग्रह दिखाया, उसे मैं कभी भूल नहीं सकता। इसीलिए मैं बदले में आपको यह अंगूठी देने आया हूँ। मगर मैं सच्ची बात बता रहा हूँ कि मैं अपराधी नहीं हूँ।

और आइंदा कभी आपके सामने न आऊँगा, लेकिन मैं आपसे यह बिनती करना चाहता हूँ कि आपने मुझ पर कौन-सा इलज़ाम लगाकर मुझे मौत की सज़ा सुनायी! मेहरबानी करके बता दीजिये।"

राजा ने जब अबू सीर के हाथ से अंगूठी लेकर अपने हाथ में पहन ली, तब उसकी जान में जान आ गयी। वह अबू सीर को गले लगाते हुये बोला—"अबू! तुम मेरी क्रूरता को भूल जाओ, अगर कोई दूसरा आदमी होता तो मेरी अंगूठी वापस न करता। अब मुझे शक होता है कि अबू कीर नामक रंगरेज ने तुम पर झूठा इलज़ाम लगाया है। उसने मुझे बताया कि तुम मेरे दुश्मनों की ओर से रोमहरिनी नामक दवा के द्वारा मुझे मारने की सोच रहे हो।"

ये शब्द सुनते ही अबू सीर की आँखों में पानी आया। उसने राजा को बताया कि अबू कीर प्रारंभ से उसके साथ कैसे दगा देते आ रहा है, तब बोला—"महाराज, रोमहरिनी नामक उबटन खाने से मौत ज़रूर हो जाती है। मगर उसे शरीर पर हमारे देश का हर कोई मलता है। इससे कोई ख़तरा नहीं है।"

राजा ने अबू सीर की बातों पर यक़ीन किया, लेकिन अबू सीर की मांग पर राजा ने सराय के दर्बान को तथा अबू
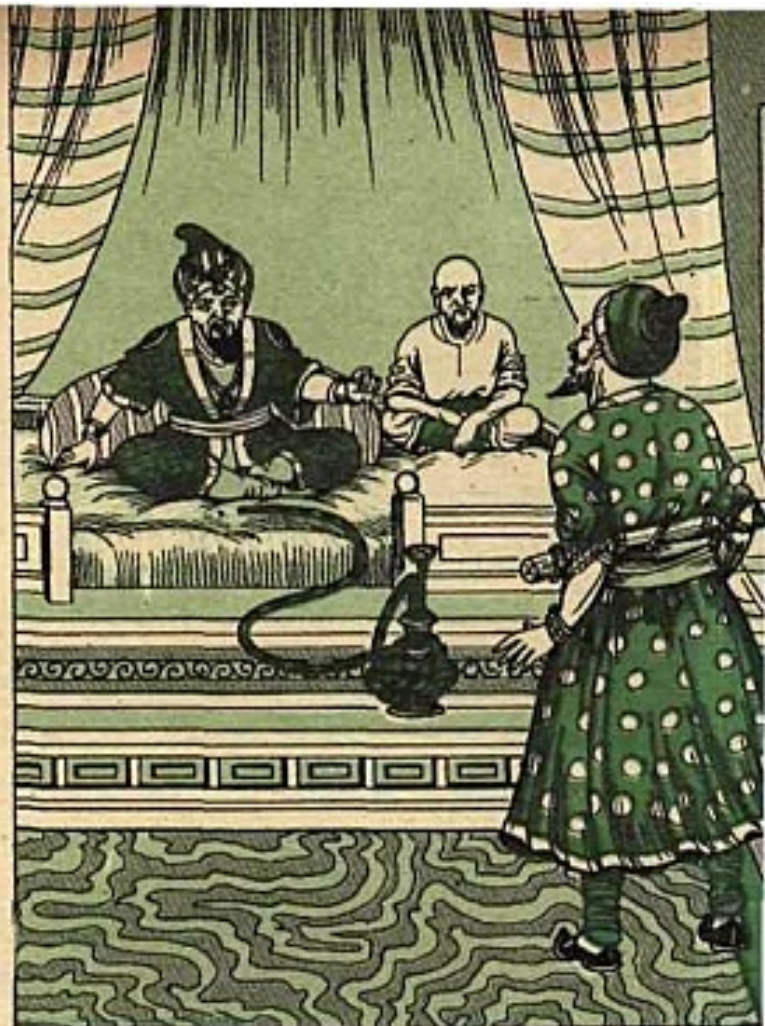
कीर के पास काम करने वाले नौकरों को बुलवा कर दरियाफ़्त किया और अबू सीर की बातों को सही पाया। इसके बाद उसने सिपाहियों को आदेश दिया—"तुम लोग रंगरेज अबू कीर के हाथ-पैर बांध कर खींच लाओ।"

सिपाहियों ने जाकर अबू कीर को पकड़ लिया और उसे राज दरबार में खींच लाये। अबू कीर ने सोचा था कि अब तक अबू सीर मर गया होगा, मगर उसे राजा की बगल में बैठे देख उसका दिल धड़कने लगा।

राजा ने अबू कीर को देख पूछा—"यह तुम्हारा दोस्त है। तुमने इसका अपमान

किया, लूटा और गालियाँ भी दीं। मारा, धोखा भी दिया, आखिर इसे मार डालने का भी प्रयत्न किया। अल्लाह के अनुग्रह से यह मरा नहीं, क्या तुम इन बातों को इनकार कर सकते हो?"

"इनकार नहीं कर सकता! कैसे इनकार कर सकेगा?" गवाहियों ने एक स्वर में कहा। इस पर राजा ने अपने सिपाहियों को आदेश दिया—"तुम लोग इस दुष्ट के पैर पकड़ कर सारे नगर में घसीट दो, बाद चूनेवाले पत्थरों से भरे बोरे में डालकर समुद्र में फेंक दो।"

अबू सीर परेशान होते हुये बोला—"महाराज, मेरी प्रार्थना है कि इसे छोड़ दे! मैं इसे माफ़ कर दूँगा।"

"तुम भले ही इसे माफ़ कर दो, लेकिन मैं इसे माफ़ नहीं कर सकता। सिपाहियों, इसे ले जाओ।" राजा ने कहा।

सिपाही अबू कीर के द्रोह का ढिंढोरा पीटते हुए सारे नगर में उसे घसीटते ले गये, अंत में उसे चूने से भरे बोरे में डाल कर समुद्र में फेंक दिया। चूने के जलने के साथ पानी में अबू कीर मर गया।

इस के बाद राजा ने अबू सीर से कहा—"अबू! तुम जो भी चाहो, मांगो, दे दूँगा।"

"महाराज, मुझे सिर्फ़ अपने देश को लौटने की इच्छा है और कोई इच्छा नहीं है!" अबू सीर ने जवाब दिया।

"तुम को मैं अपने मंत्री बना लूँगा! स्वीकार करते हो?" राजा ने पूछा।

अबू सीर ने विनय के साथ अस्वीकार किया, इस पर राजा ने अबू के लिए एक बहुत बड़ा जहाज तैयार कराया, उसमें अपार धन के साथ स्त्री-पुरुष गुलामों को भर कर अबू को अलेग्जांड्रिया भेज दिया।

अबू सीर जब अलेग्जांड्रिया के बंदरगाह में उतरा, तब एक बोरा वहाँ पर तैरते हुए आया। उसमें अबू कीर की लाश थी। अबू सीर ने उस शव को समुद्र के किनारे ही दफ़नाया। (समाप्त)

सराय

एक बार जमालपुर के सब बुजुर्गों ने मिलकर यह तै किया कि मुसाफ़िरों की सुविधा के लिए एक सराय बनवायी जाय और रसोई बनाने के लिए एक बूढ़ी को नियुक्त किया जाय, साथ ही हिसाब-क़िताब रखने एक मुंशी को तथा अन्य काम करने के लिए एक नौकर भी रखा जाय। इसका सारा खर्च मंदिर के मातहत रहनेवाली ज़मीन से उठाया जाय।

कुछ दिन तक सराय का प्रबंध बड़ा अच्छा रहा। सराय गाँव से थोड़ी दूरी पर थी। इसलिए सिवाय मुसाफ़िरों के गाँव का कोई आदमी उधर आता जाता न था। साधारण यात्री सराय में भोजन करके रात को वहीं सो जाते और सुबह उठ कर अपनी राह चले जाते। यदि मुसाफ़िर पैसेवाले होते सराय के कर्मचारियों को थोड़ा-बहुत इनाम देकर तब चले जाते।

इस तरह सराय के कर्मचारी पैसे वसूलने के आदी हो गये। इसलिए उन लोगों ने सभी यात्रियों से पैसे वसूलना शुरू किया। जो पैसे न देते उन्हें सराय में क़दम तक न रखने देते थे। यात्रियों के सराय में पहुँचते ही नौकर अपना इनाम पहले ही वसूल कर लेता, और बिना पैसे दिये मिसरानी खाना न परोसती। मुंशी के हाथ पैसे न लगे तो सोने की जगह वह न देता। इस प्रकार धर्मशाला धीरे-धीरे होटल बन गयी। मगर सराय के तीनों कर्मचारी बड़ी सावधानी से इस रहस्य को गाँववालों से गुप्त रखते थे।

एक बार एक युवक महोबा नामक गाँव जाते रात होने के कारण जमालपुर पहुँचा और वहाँ की सराय में आराम करना चाहा। लेकिन उसके पास पैसे न थे, इसलिए सराय के कर्मचारियों ने उसे

सुधा पांडे

सराय के अन्दर आने न दिया। उस रात को वह भूखा रहा, किसी पेड़ के नीचे सोया और दूसरे दिन महोवा जाकर यह समाचार अपने मित्रों को सुनाया।

यह समाचार सुननेवालों में केशवदास नामक एक युवक भी था। उसने सराय के कर्मचारियों को अच्छा सबक़ सिखाना चाहा। वह अपने एक नौकर को साथ ले रात के भोजन के समय तक जमालपुर की सराय में पहुँचा। सराय में पहुँचने के पहले उसने अपने नौकर को आदेश दिया कि वह जमालपुर के बुजुर्गों के पास पास जाकर यह ख़बर दे कि जमालपुर के राजा का बहनोई सराय में ठहरे हुये हैं।

केशवदास ज्यों ही सराय के पास पहुँचा त्यों ही सराय के नौकर ने निकट आकर कहा–"साहब, पैसे निकालिए, मैं आपके स्नान का इंतज़ाम कर देता हूँ।"

केशवदास बहरे का सा अभिनय करते बोला–"हाँ, हाँ, मैं अकेला ही आया हूँ।" ये शब्द कहते वह सराय में घुस गया।

भोजनालय में मिसरानी पत्तल लगा कर सबको खाना परोस रही थी। उसने केशवदास को देख कहा–"पैसे दीजिये, मैं आपके लिए भी पत्तल डाल देती हूँ।"

"मुझे किसी भी चीज़ से परहेज़ नहीं, मैं सब खा लेता हूँ, चिंता न करो।" ये शब्द कहते केशवदास परोसे गये एक पत्तल के सामने बैठ गया।

"अजी, उठ जाइये। यह पत्तल आपके लिए परोसा नहीं गया।" मिसरानी चिल्ला उठी। मगर केशवदास ने अनसुनी कर दी।

"ऐ बूढ़ी माँ, उसको बैठने दो न! बेचारा ऊँचा सुनता है।" खानेवाले लोगों ने बूढ़ी को डांट बतायी। उन लोगों ने बूढ़ी को समझाया कि खाने के पत्तल के सामने से किसी को उठवा देना बड़ा पाप है, इस पर मिसरानी चुप रह गयी।

केशवदास ने भर पेट खाना खाया और मुंशी को देख कहा–"मेरे लिए बिछौने का कहाँ पर इंतज़ाम किया है?"

किशन हूँ। मेरे बतख हड़प कर तुमने मुझे पच्चीस मार जड़वा दिये। मारों का ऋण चुक गया, पर बतखों का मूल्य चुकाने के लिए मैं फिर दो दफे तुम्हारे पास आ जाऊँगा।" यह कहकर किशन चला गया।

रविदास के नौकरों ने जंगल में बड़ी देर तक उसकी खोज की, आखिर उसका पता लगा कर उसे घर ले गये। रविदास मारों की पीड़ा के साथ डर के मारे भी बीमार पड़ गया।

कुछ दिन बाद यह खबर किशन के कानों में पड़ी। तब वह वैद्य का वेष धर कर उस शहर के एक सराय में जा ठहरा। सराय में कुछ लोग रविदास की बीमारी के बारे में बात कर रहे थे, किशन ने उन लोगों ने कहा–"अरे, मैं तो कुछ ही क्षणों में उस बीमारी का इलाज कर सकता हूँ।"

यह खबर रविदास को मालूम हो गयी। उसने नये वैद्य को अपने घर बुला भेजा।

"वैद्यजी, क्या मैं फिर उठकर चल-फिर सकता हूँ?" रविदास ने पूछा।

"क्यों नहीं साहब? मैं ऐसी दवा बना कर दूँगा कि चंद मिनटों में तुम्हारी बीमारी जाती रहेगी!" ये बातें कहकर किशन ने रविदास के एक नौकर को बुलाकर कहा– 'भाई, तुम अमुक दवा लेते आओ।' इस तरह रविदास के सभी नौकरों को किशन ने

कोई न कोई बहाना करके घर से बाहर भेज दिया। तब उसने एक लाठी लेकर कहा–"तुम्हारा असली इलाज यही है। क्या तुम मुझे वैद्य समझते हो? नहीं, मैं बतखोंवाला किशन हूँ। बतखों का मूल्य दुबारा वसूल करने आया हूँ।"

मार खाकर भी रविदास चिल्ला नहीं पाया। भय के मारे उसकी आँखें पथरायी गयी थीं। इस पर किशन ने लाठी दूर फेंक दी, तिजोरी खोल कर बतखों का मूल्य ले लिया, तब यह कहकर चल पड़ा– "फिर एक बार तुम से मिलूँगा।"

इसके बाद कई साल बीत गये। रविदास उठकर चल-फिर रहा था। वह बतखोंवाले

किशन को बिलकुल भूल ही गाया था। लेकिन किशन के मन में एक बार और रविदास से मिलने की इच्छा हुई।

एक दिन सवेरे किशन शहर की हाट में गया। रविदास तब तक वहाँ पर आया न था। मगर एक आदमी वहाँ घोड़ा बेच रहा था। किशन ने उस घोड़े की खासियत के बारे में दरियाफ़्त किया। घोड़ेवाले ने बताया–"इस घोड़े से बढ़कर तेज़ दौड़नेवाला घोड़ा दूसरा नहीं है।"

"मुझे तो ऐसा ही घोड़ा चाहिये। यदि तुम मेरे कहे मुताबिक़ करोगे तो मैं तुम्हारा घोड़ा खरीद लूंगा।" किशन ने जवाब दिया।

"बताओ, मुझे क्या करना है?" घोड़ेवाले ने पूछा।

"सामने दीखनेवाले रास्ते में अमीर रविदास घोड़ा गाड़ी पर आता होगा, तुम उसके सामने जाकर ज़ोर से चिल्लाओ– "मैं बतखोंवाला किशन हूँ, और तेज़ी से चले आओ, वरना खतरे में पड जांओगे।"

घोड़ा बेचनेवाला अपने घोड़े पर रविदास की गाड़ी के सामने जा पहुँचा और बोला–"मैं ही बतखोंवाला किशन हूँ।" यह कहकर उसने अपने घोड़े को दौड़ाया।

रविदास ने जल्दी अपनी गाड़ी को रुकवा दिया, घोड़ों को खुलवाकर अपने नौकरों को आदेश दिया–"तुम में से जो आदमी उस घोड़ेवाले को पकड़ेगा, उसे मैं दो सोने के सिक्के दूंगा। जल्दी करो।" इस पर रविदास के नौकर घोड़ेवाले को पकड़ने के लिए उसके पीछे हो लिये, पर रविदास अकेला गाड़ी में रह गया। उस बक़्त किशन ने उसके पास पहुँचकर कहा– "बतखोंवाला किशन वह नहीं, मैं हूँ।"

रविदास का चेहरा डर के मारे पीला पड़ गया। किशन ने उसकी जेब में हाथ डालकर रुपयों की थैली ले ली और कहा– "अब तुमने मेरा ऋण चुकाया।" यह कहकर किशन चला गया। इसके बाद रविदास ने फिर कभी किशन को न देखा।

ब्राह्मण की युक्ति
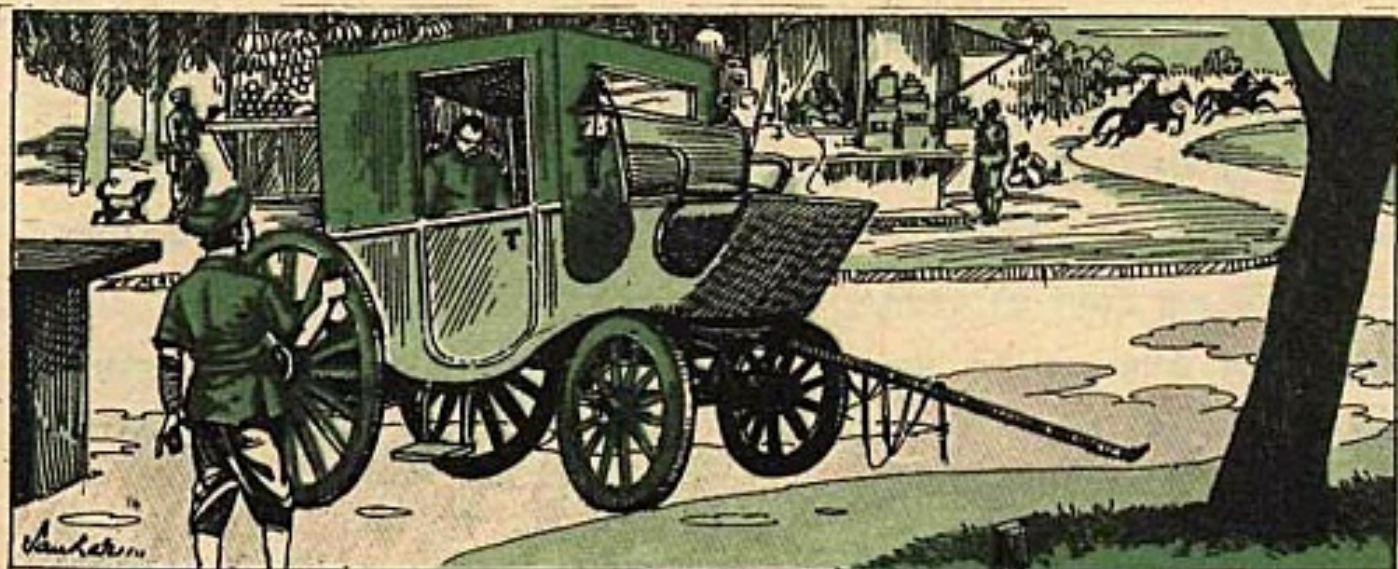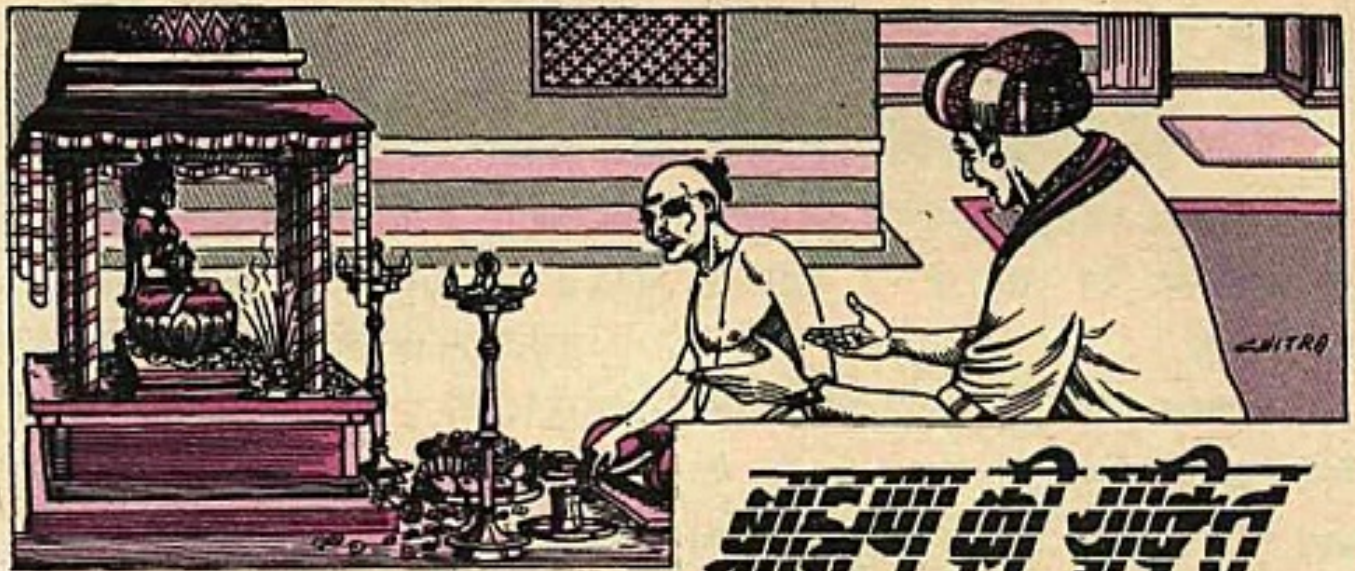
सुरेन्द्रनगर के राजवंश का पुरोहित जाधोजी भट्ट था। वह नब्बे साल का हो गया था। इसलिए उसने दरबार में जाना छोड़ दिया, और साल में एक बार सालना वेतन लेने जाया करता था। उसके स्थान पर उसका भतीजा वल्लभजी राज पुरोहित का काम देखा करता था।

जाधोजी भट्ट वैसे राज सेवा से निवृत्त हो गया था, फिर भी दरबार के कामकाजों के बारे में दिलचस्पी लेता था। हर दिन वल्लभजी के घर लौटते ही दरबार के समाचार जान लेता था।

एक दिन जाधोजी घर पर पूजा कर रहा था, तभी वल्लभ जी ने घर लौटकर बताया कि राजकुमार राज्य का बंटवारा करने जा रहे हैं। उस राज्य में दो नगर और बारह गाँव थे। सुरेन्द्र नगर और चूड़ा नगर नाम से दो नगर थे। राजकुमारों के नाम अर्जुनसिंह और सबल सिंह थे। उन दोनों में हर एक को एक नगर और छे गाँव मिल सकते थे। मगर दोनों राजकुमार सुरेन्द्र नगर को चाहते थे। इस कारण से बंटवारा रुक गया था।

जाधोजी भट्ट पूजा समाप्त कर उठ बैठा। उसकी इच्छा थी कि अर्जुनसिंह को सुरेन्द्रनगर मिल जाये! उसने अपने मन में निश्चय कर लिया कि सुरेन्द्र नगर बड़े राजकुमार को दिलाकर, दूसरे राजकुमार को चूड़ा नगर दिलाया जाय।

दूसरे दिन जाधोजी भट्ट राज दरबार में गया। अचानक जाधोजी को राज दरबार में देख दरबारी सब आश्चर्य में आ गये। एक कमरे में राजकुमार बातचीत कर रहे थे। जाधोजी वहाँ पहुँचा।

"आप ने यहाँ पर आने का कष्ट क्यों किया? खबर कर देते तो हम ही आपके

जनार्दन राय

घर चले आते! आपने नाहक़ कष्ट क्यों किया?" राजकुमारों ने कहा ।

"बेटे! मैंने यह सुना कि तुम दोनों राज्य को बाँट रहे हो! इसलिए तुम दोनों को आशीर्वाद देने आया हूँ ।" जाधोजी भट्ट ने कहा ।

"बंटवारा कैसे हो, यह अभी तक निर्णय न हो पाया, मैं कहता हूँ कि मैं बड़ा हूँ, इसलिए मुझे पहले चुनने का अधिकार होना चाहिए । लेकिन सबल सिंह कहता है कि वह छोटा है, इसलिए उसे पहले चुनने का हक़ होना चाहिए । आप ही निर्णय कर क्यों नहीं बताते कि हम दोनों में किसका कहना ठीक है ।" अर्जुन सिंह ने कहा ।

"मैं कैसे कह सकता हूँ? क्योंकि तुम दोनों मेरे लिए बराबर हो । अलावा इसके राज-व्यवहारों में दखल देना मुझे बिलकुल पसंद नहीं है । मैं इन सब से अवकाश ले चुका हूँ ।" जाधोजी भट्ट ने कहा ।

"इसीलिए आपका निर्णय हमारे लिए स्वीकार होगा । आप जैसा कहेंगे, हम वैसा मान लेंगे । आप पर हमारा पूरा विश्वास है ।" दोनों राजकुमारों ने कहा ।

"मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ, सुनो । प्राचीन काल में एक ऋषि के यहाँ दो शिष्य थे । बारह वर्ष तक गुरु की सेवा करते दोनों शिष्यों ने सारी विद्याएँ सीख लीं और गुरु से अपने घर जाने की अनुमति मांगी । उस वक़्त ऋषि ने अग्नि

कुण्ड से थोड़ा सा भस्म निकाल कर दोनों शिष्यों के हाथों में रखा। एक शिष्य ने तुरंत उसे मुंह में डालकर निगल डाला और दूसरे ने उसे फेंक दिया। जिसने भस्म निगल डाला, वह बड़ा विद्वान बनकर सुखी रहा और दूसरा मंदबुद्धिवाला बनकर गुरु की निंदा करने लगा कि गुरु ने उसे ठीक से नहीं पढ़ाया। इस प्रकार तुम दोनों मेरी निंदा न करोगे तो कल मैं तुम्हारे बंटवारे का एक उपाय बताऊंगा।" जाधोजी भट्ट ने कहा।

दूसरे दिन सवेरे पुरोहित के कहे अनुसार दोनों ने बंटवारे के लिए मान लिया। इसके बाद जाधोजी भट्ट ने घर लौटकर अर्जुनसिंह के नाम एक चिट भेजा, उसमें लिखा था—"तुम अच्छे शिष्य का सा व्यवहार करो, तुम्हारा भला होगा।"

दूसरे दिन सवेरे जाधोजी राजमहल में आया। उसके साथ दोनों राजकुमार एक कमरे में गये। जाधोजी भट्ट ने तह किये हुए दो कागज़ निकाले और कहा—"इन पर मैंने सुरेन्द्र नगर और चूड़ा नगर लिख रखा है। तुम दोनों एक एक कागज़ निकालो, तुम में से जिसको जिस नगरवाला कागज़ आयगा, वह नगर और उससे संबंधित छे गांव ले लो।"

अर्जुनसिंह ने झट एक कागज निकाला और उसे खोलकर देखे बिना ही मुंह में डालकर निगल डाला।

सबल सिंह ने आश्चर्य के साथ पूछा—"तुमने यह नहीं देखा कि उस पर क्या लिखा है?"

"इसमें क्या है? तुम्हारे कागज़ पर जो लिखा नहीं गया है, वह नगर मेरा है।" अर्जुन सिंह ने उत्तर दिया।

सबल सिंह ने अपना चिट खोलकर देखा, उस पर चूड़ा नगर लिखा हुआ था।

इस प्रकार राज्य का बंटवारा हो गया। आज भी सुरेन्द्र नगर के लोग यह कहते हंसते हैं कि बूढ़े पुरोहित ने दोनों चिटों पर "चूड़ा नगर" लिखकर सबलसिंह को धोखा दिया है।

रसोइये के नौकर

एक बार एक नवाब अपने एक अमीर के घर दावत में गया। नवाब को अच्छी-अच्छी चीज़ें खाने की लालसा थी। वह हर जून बहुत ही स्वादिष्ठ व्यंजन बनवाकर खाया करता था। उसके यहाँ निपुण रसोइये थे। मगर अमीर के घर का खाना नवाब के घर के खाने से बड़ा ही मजेदार था।

"यह खाना बनानेवाला रसोइया हमारे राजमहल में रहने लायक़ है। इसे मेरे साथ भेज दो।" यह कहकर नवाब उस रसोइये को अपने साथ राजमहल में ले गया और मासिक पचास मुहर तनख्वाह देने लगा। इतनी रक़म नवाब को बेकार खर्च न लगी। क्योंकि उसकी रसोई वास्तव में बड़ी अच्छी होती थी। इसलिए कुछ दिन बाद नवाब ने रसोइये का वेतन सौ मुहर बनाया।

उस दिन से नवाब को लगा कि रसोई का स्वाद घटता जा रहा है। जल्दी ही यह बात साबित भी हो गयी। असली बात जानने के लिए एक बार नवाब रसोई घर में गया। वहाँ पर रसोइया एक आसान पर बैठे हुक्का पी रहा है। दो नये आदमी रसोई बना रहे हैं। नवाब ने रसोइये से पूछा—"ये दोनों कौन हैं?" रसोइये ने झट बताया—"ये मेरे नौकर हैं।"

"तुम को मैंने रसोइया रखा, लेकिन रसोइयों का मालिक नहीं बनाया। यह मेरी ही भूल थी कि मैंने तुम्हारा वेतन बढ़ाया।" यह कहकर नवाब ने रसोइये का वेतन फिर कम कर दिया।

भूतों का तालाब

प्राचीनकाल में माँधवी नामक गाँव के पास एक तालाब था। गर्मी के मौसम में भी वह तालाब पानी से भरा रहता था। गाँव के खेत, पशुओं तथा लोगों के पानी पीने व स्नान के लिए भी उसी तालाब का पानी इस्तेमाल किया जाता था।

उस तालाब के उत्तर में गाँव का श्मशान था। लोगों का विश्वास था कि उस श्मशान में जिनका दहन-संस्कार होता है वे सब भूत बनकर उस तालाब के आश्रय में रहते हैं। इसलिए लोग उसे भूतों का तालाब कहा करते थे। इस तरह वह जिंदा लोगों के लिए ही नहीं, मरे हुए लोगों के लिए भी काम देता था। अंधेरा फैलने के बाद गाँव का एक भी व्यक्ति उस तालाब के पास पटकता न था।

गाँव का कोई दुष्ट आदमी मरता तो लोग समझते कि भूतों ने ही उसे दण्ड दिया है जिस से गाँव का पिण्ड छूट गया है। वे यह सोचकर तृप्त हो जाते थे कि भूत अच्छे लोगों की हानि नहीं करते।

उस गाँव में मारीच नामक एक विचित्र आदमी था। उसकी औरत बड़ी खूबसूरत थी। मारीच उसे अपनी जान से बढ़कर प्यार करता था। वह कोई काम-धंधा करता न था। उसकी औरत मजूरी करके दोनों का पेट पालती थी।

एक बार मारीच की औरत बीमार पड़ी और उसकी अकाल मृत्यु हो गयी। अपनी पत्नी की मौत की खबर सुनते ही मारीच बेहोश होकर गिर पड़ा। उस बेहोशी की हालत में उसे ऐसा लगा कि कई भूत एक साथ उसकी औरत को तालाब की ओर खींचकर ले जा रहे हैं।

वह दृश्य मारीच को ऐसा यथार्थ मालूम हुआ कि होश में आते ही वह अपनी

हरि किशन

औरत का नाम लेकर पुकारते हुए तालाब की ओर दौड़ पड़ा। गाँव के लोग यह सोचकर डर गये कि या तो उसका मति-भ्रमण हो गया, उसमें भूत का प्रवेश हो गया है।

मारीच की औरत की लाश को श्मशान में ले जाकर जलाना बड़ा कठिन हुआ। क्योंकि मारीच यह कहते जलाने से रोक रहा था–"मेरी औरत मरी नहीं, मत जलाओ।" वह अपने बाल नोचता, पागल की तरह चिल्ला उठता। लोगों को उस पर दया आ गयी, मगर वास्तव में उसका मति-भ्रमण हो गया था।

मारीच धीरे धीरे पागल ही बन गया, कोई भी औरत सामने दिखाई देती तो उसके पास जाता और उसके चेहरे को ध्यान से देखता कि कहीं उसकी पत्नी तो नहीं। अगर पुरुषों को देखता तो चिल्ला उठता–"क्या तुम्हीं मेरी औरत को तालाब की ओर खींच ले गये? सच बताओ।" गाँव के लोग उसके सामने आने से सकुचाते थे। गलियों में उसे देखते ही लोग दर्वाज़े बंद कर लेते थे। कुछ लोग यह सोचकर भयभीत हो जाते थे कि कभी न कभी मारीच भूत बनकर गाँव के लोगों को तंग करेगा।

कुछ लोगों ने सुझाया कि ओझा को बुलवाकर मारीच का इलाज कराना अच्छा होगा। मगर कुछ लोगों ने यह शंका प्रकट की कि ऐसा करने से भूत नाराज़

होकर गाँव पर टूट पड़ेंगे, इसलिए हम नाहक़ ख़तरा क्यों मोल ले!

मारीच खाना-पीना छोड़कर तालाब के पास श्मशान में घूमने लगा। वह उस जगह बैठकर रोया करता जहाँ पर उसकी औरत को जलाया गया था। सियार सब उसके चारों तरफ़ घिर जाते। वर्षा होने पर भी वह श्मशान को छोड़ता न था। वह वहीं पर सो जाता।

एक बार मारीच ने एक दृश्य देखा। तालाब से कई आकृतियाँ एक साथ उठकर कोलाहल करने लगीं। उसने सोचा कि वे सब भूत हैं और उनमें उसकी औरत भी होगी। यह सोचकर वह अपनी औरत का नाम लेकर पुकारने लगा।

मारीच की चिल्लाहट सुनकर कुछ भूत उसके पास आ पहुँचे। मारीच ने भूतों से पूछा—"क्या तुम्हीं लोग मेरी औरत को उठा ले गये? मुझे जल्दी उसे दिखाओ। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा?"

"हम लोग तुम्हारी औरत को उठा ले गये हैं, यह बात तो सच है। क्योंकि हमने अपना कर्तव्य किया है। लेकिन तुम्हारी औरत दो दिन पहले फिर मर गयी है। हम उसे तुमको कैसे दिखा सकते हैं?" भूतों ने जवाब दिया।

"तुम लोग झूठ बोलते हो? क्या कोई भी इस बात पर यक़ीन कर सकता है? क्या भूत कहीं मर जाते हैं?" मारीच ने क्रोध में आकर पूछा।
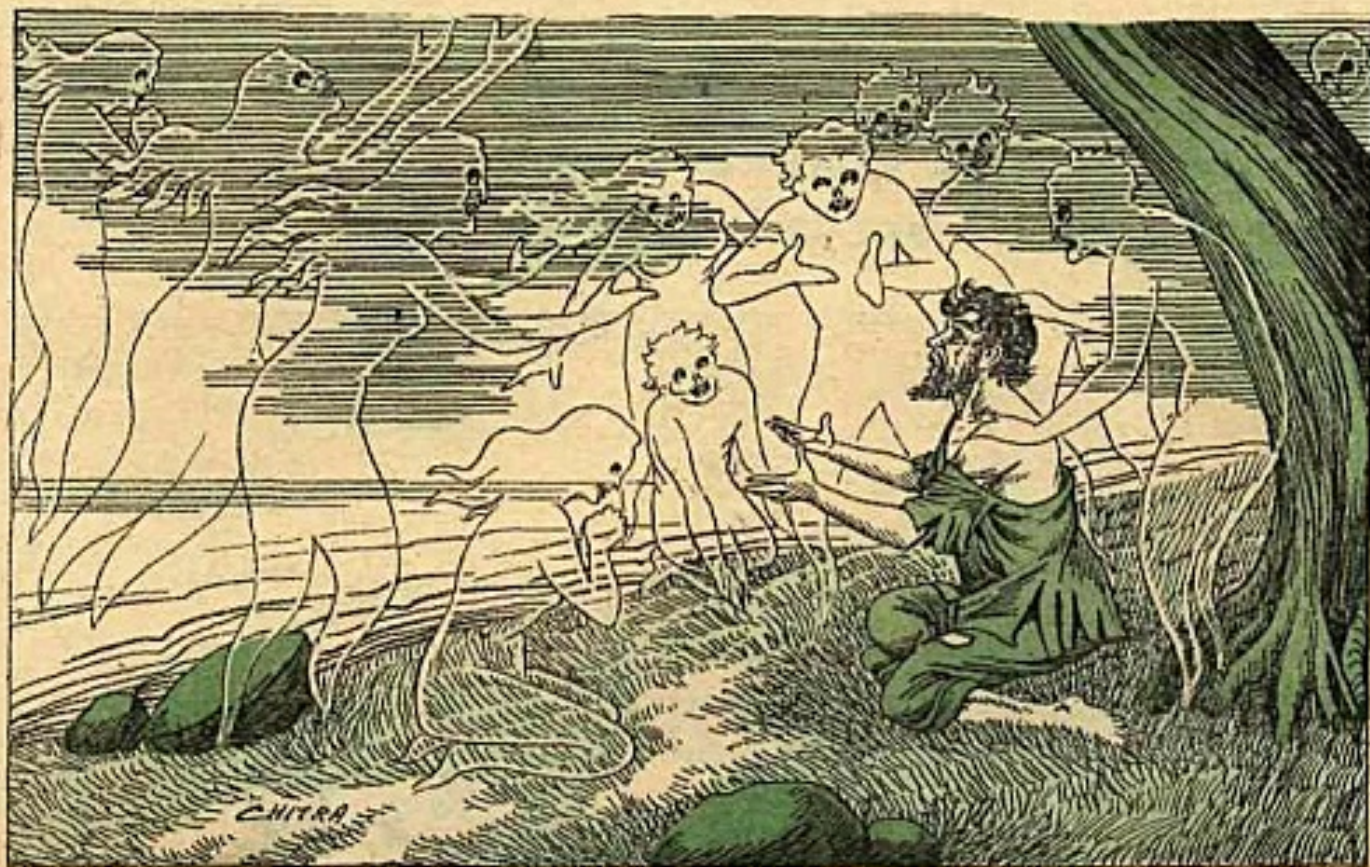
"हमारी भी मौत होती है। जैसे तुम अपनी औरत के वास्ते रो-रोकर कमज़ोर हो गये हो, वैसे ही तुम्हारी औरत कमज़ोर होकर मर गयी है। आज हम लोग बेताल के आदेश पर इस तालाब को छोड़कर दूसरी जगह जा रहे हैं। हमारे बीच तुम्हारी औरत नहीं है। चाहे तो तुम देख लो!" भूतों ने कहा।

"तब तो मरने के बाद मेरी औरत कहाँ गयी?" मारीच ने पूछा।

"इसी तालाब में मछली का रूप धर कर तुम्हारी औरत घूम रही है। हम भी उसे पहचान नहीं सकते! अब तुम भी उसे भूल जाओ।" ये बातें बताकर भूत सब चले गये।

"मेरी औरत चाहे जिस रूप में क्यों न हो, मैं उसे पहचान सकता हूँ।" मारीच ने कहा।

दूसरे दिन मारीच गाँव में गया। एक जाल लाकर तालाब की मछलियों को फँसाने लगा। जाल में आयी हुई एक एक मछली की वह जाँच करता और अलग रख देता। गाँववाले मछलियों को ख़रीदने आ पहुँचे। मगर मारीच ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया।

गाँववाले थोड़ी-सी मछलियाँ लेते और उनके पैसे वहीं डाल चले जाते। शाम के होते-होते मछलियों का ढेर खतम हो जाता और पैसों का ढ़ेर लग जाता।

मगर मारीच के मन में उसकी औरत को पाने की आशा बनी रही। वह रोज़ तालाब से मछलियाँ पकड़ता और हर एक मछली की जाँच करते अपने दिन बिताने लगा। अपनी औरत को पाने की आशा से वह ज़िंदगी से विरक्त नहीं हुआ। उसी आशा ने उसे मामूली आदमी बनाया।

गाँववालों ने सोचा कि मारीच बदल गया है, और वह फिर से मामूली अदमी बन गया है। उसे यह यश भी मिला कि उसी ने तालाब के भूतों को भगा दिया है। धीरे धीरे उसके "भूतों का तालाब" वाला नाम जाता रहा।

"भाइयो, अब हमें एक वर्ष का अज्ञातवास करना होगा। इस अवधि में हमारा पता किसी को न लगना होगा। बताओ, हम लोग अपना अज्ञातवास किस देश में करें?" युधिष्ठिर ने पूछा।

"पांचाल, चेदि, मत्स्य, शूरसेन, षटच्छर, वीशार्ण, नवराष्ट्र, मल्ल, साल्व, युगंधर, कुंति, सुराष्ट्र, अवंति इत्यादि देश बहुत ही संपन्न हैं। इनमें से हम किसी भी देश में अज्ञातवास कर सकते हैं। हमें धर्मदेवता का अनुग्रह भी प्राप्त हो गया है, अतः हमारे अज्ञातवास में विघ्न पैदा न होगा।" अर्जुन ने उत्तर दिया।

"मत्स्य देश का राजा विराट धर्मात्मा, बलवान तथा हमारा हितैषी भी है। हम उसके यहाँ एक वर्ष तक नौकरी करेंगे। तुम लोग कौन सा पेशा अपनाना चाहते हो?" युधिष्ठिर ने पूछा।

इस पर अर्जुन ने दुखी स्वर में कहा—"भैया, हमारी तो कोई चिंता नहीं, लेकिन आपने कभी किसी की सेवा नहीं की है। इसलिए विराट के यहाँ नौकरी कैसे करेंगे? इस बात का स्मरण करते ही हमारा दिल फटा जा रहा है।"

तब युधिष्ठिर ने कहा—"मैं ब्राह्मण का वेष धरकर कंक के नाम से राजा विराट की सभा में नौकरी पा लूँगा। पाँसे चलाकर राजा, मंत्री और सामंतों का मनोरंजन करूँगा। अगर वह मुझसे पूछे कि तुम इसके पहले कहाँ और क्या

३८. अज्ञातवास का प्रारंभ

काम करते थे, तो मैं बताऊँगा कि मैं राजा युधिष्ठिर के अंतरंग मित्र था।" ये शब्द कहकर युधिष्ठर ने भीम से पूछा–"भीमसेन! तुम राजा विराट के दरबार में क्या काम करना चाहते हो?"

"मैं रसोई बनाने की कला जानता हूँ। मैं अपना नाम वल्लव रख लूंगा। विराट को अनोखे व्यंजन खिलाऊँगा। बिना हथियार के लकड़ी चीरकर राजा को खुश करूँगा और देखूंगा कि राजा मुझे हिम्मत के कार्य सौंपे, राजा के मनोरंजन के वास्ते बड़े-बड़े पहलवानों को हरा दूंगा। यदि मेरा पूर्व परिचय मांगे तो यही कहूँगा कि मैं युधिष्ठर के पास नौकर था। मैं इस बात का ख्याल रखूंगा। कि कोई मुझे न पहचाने। आप मेरी चिंता न करें।" भीम ने समझाया।

अर्जुन की समस्या तो पहले ही हल हो गयी थी। ऊर्वशी ने उसे नपुंसक बनने का शाप दिया था, इंद्र ने उस शाप को अज्ञातवास के समय भोगने का अर्जुन को मौक़ा दिया था। इसका स्मरण दिलाते हुए अर्जुन ने कहा–"मैं बृहन्नला के नाम से अत:पुर में पहुँच जाऊँगा। ऐसा वेष बनाऊँगा जिससे स्त्री और पुरुष के दोनों रूप लोग मुझमें देख सके। नृत्य और संगीत के द्वारा मैं अंत:पुर की नारियों का मनोरंजन करूँगा। यदि राजा मुझसे पूछे कि तुम इसके पूर्व क्या करते थे, तो मैं यही कहूँगा कि मैं द्रौपदी की सेवा किया करता था।"

इसके बाद नकुल ने कहा–"मैं दाम ग्रन्थी नाम से राजा विराट के घोड़ों का शिक्षक बन जाऊँगा। घोड़ों की बीमारियों का इलाज करूँगा। मैं अश्व-चिकित्सा अच्छी तरह से जानता हूँ। अपना परिचय यही दूंगा कि इसके पूर्व मैं युधिष्ठिर के पास अश्वों का अधिकारी रहा था।"

"मैं तंत्रीपाल के नाम से विराट की गायों की देखभाल करूँगा। मैं इसके पहले आपके आदेश पर यही काम किया करता

था, इसलिए मेरेलिए यह काम कोई नया नहीं है। मैं गायों तथा सांडों के बारे में अच्छी जानकारी रखता हूँ।" सहदेव ने समझाया।

अब युधिष्ठिर को द्रौपदी की चिंता हुई। उसने दूसरों से अपनी सेवा करायी है। पर कभी किसी की सेवा नहीं की है। वह अत्यंत कोमल स्वभाव की है और अपने पतियों की छाया में फली पतिव्रता है।

युधिष्ठिर को चिंतित देख द्रौपदी ने कहा—"आप लोग मेरी चिंता क्यों करते हैं? सैरंध्री का पेशा अत्युत्तम है। अन्य दासियों की तरह सैरंध्री के साथ कोई भी कठोर व्यवहार नहीं करते। ऐसे पेशे में मैं अंतःपुर की स्त्रियों के बाल संवारकर केश गूँथूंगी। विराट की पत्नी सुधेष्णा के पास गुप्त रूप से अपने दिन काटूंगी। इसलिए आप लोग मेरी चिंता न करें!"

अपने छोटे भाई तथा द्रौपदी के निर्णय पर युधिष्ठिर तृप्त हुये। उन्हों ने धौम्य, सूत तथा अन्य नौकरों को राजा द्रुपद के पास जाने का आदेश दिया। इंद्रसेन इत्यादि मंत्रियों को खाली रथों के साथ द्वारका में भेजा। सबको चेतावनी देकर भेजा कि लोगों से वे यही बतावे कि पांडवों का हमें बिलकुल पता नहीं है।
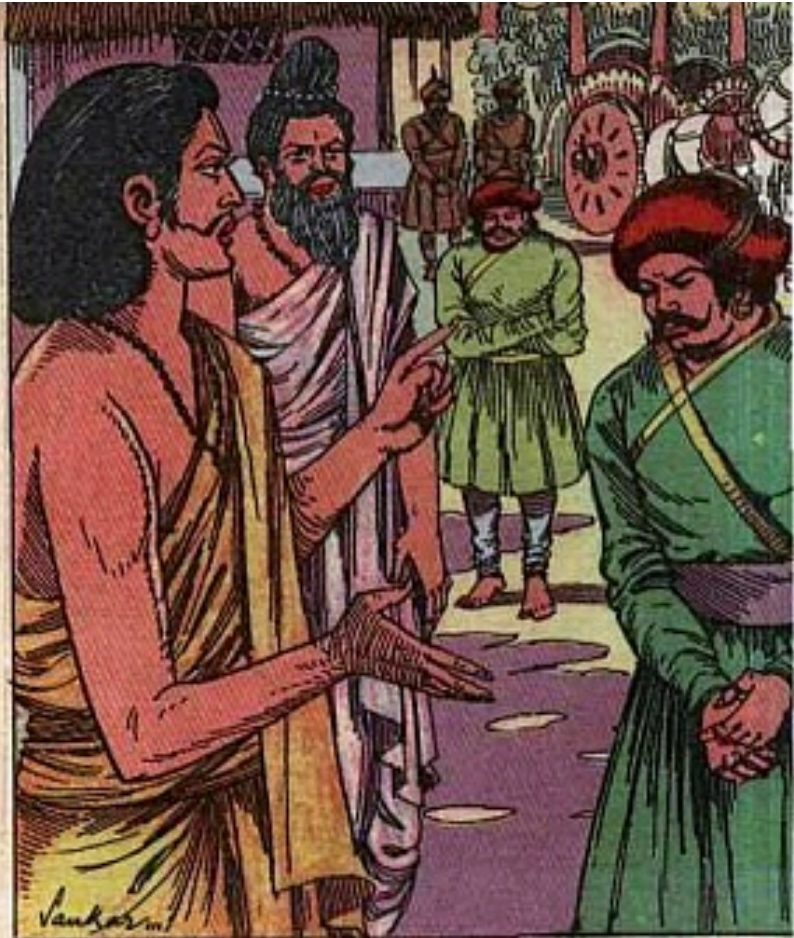
धौम्य ने पांडवों को सिखाया कि राजा की सेवा करने वालों को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये। इसके बाद सब लोग अपने अपने रास्ते चले गये, तब पांडव अपने अपने हथियार लेकर द्वैतवन से निकल पड़े। वे जंगल और पहाड़ों को पार करके मत्स्यदेश में जा पहुँचे। वह देश दशार्ण देशों के उत्तर में, पांचाल के दक्षिण में, तथा शूरसेन देशों के मध्य में था।

द्रौपदी से जब चलते न बना, तब उसने कहा—"यहाँ पर खेत और रास्ते दिखाई दे रहे हैं, लगता है कि विराट नगर यहाँ से बहुत दूर है। मैं थक गयी हूँ। आज की रात हम लोग यहीं पर बितायेंगे।"
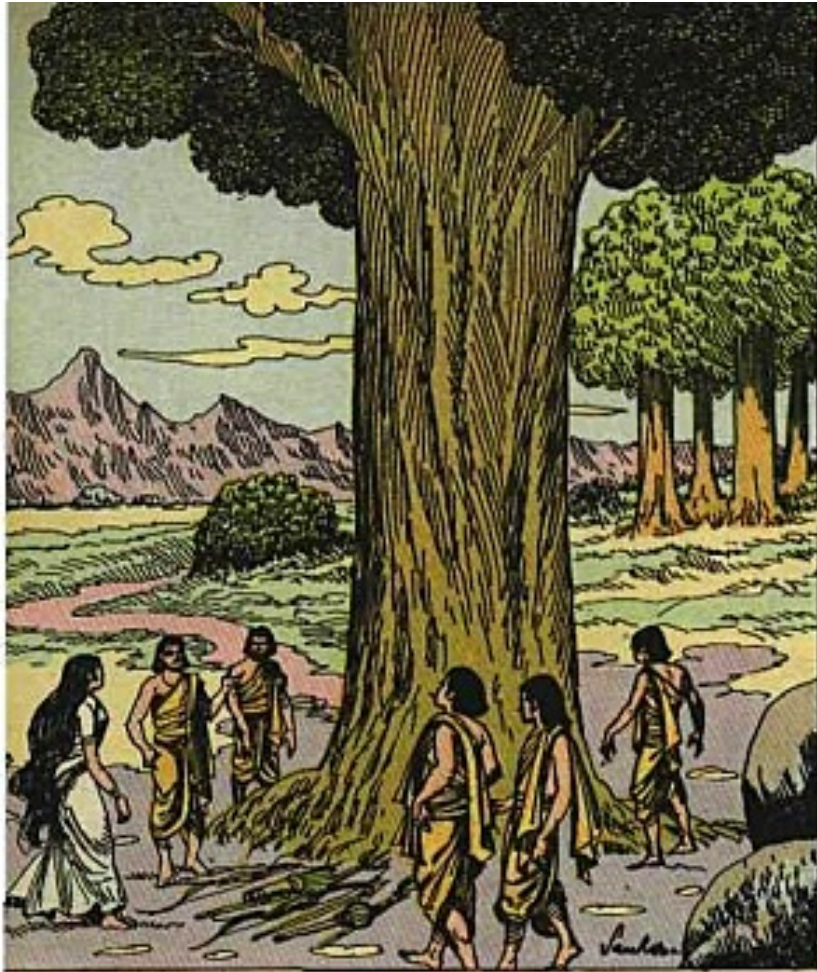
युधिष्ठिर ने उस जंगल को पार करने का निश्चय कर लिया था, इसलिए उसने अर्जुन को आदेश दिया कि वह द्रौपदी को अपने कंधों पर ढोकर लावे। इस प्रकार वे लोग चलते-चलते विराट नगर की सीमा पर पहुँच गये।

इस पर युधिष्ठिर ने अपने आयुधों के बारे में विचार किया। उन्हें लेकर नगर में पहुँच नहीं सकते थे। उल्टे अर्जुन के गांडीव से सभी लोग परिचित थे। पांडवों को पकड़ाने के लिए यही एक हथियार पर्याप्त था। इसलिए युधिष्ठिर ने अर्जुन को आदेश दिया कि उनके हथियारों को छिपाने के लिए उचित स्थान की खोज करे।

अर्जुन ने चारों तरफ़ नज़र दौड़ायी। उसे एक जगह श्मशान तथा एक घना शमीवृक्ष दिखाई दिया। उस प्रदेश में लोग भी नहीं जाते। अगर कोई उस ओर आवे तो भी शमीवृक्ष का ऊपरी भाग किसी को दिखाई नहीं देता। इसलिए अपने आयुधों को शमीवृक्ष की घनी डालों में छिपाने का अर्जुन ने निर्णय किया।

पांडवों ने अपने धनुषों को नीचे रखा। खड्गों को भी उनके साथ मिलाया। तब युधिष्ठिर के आदेश पर नकुल शमीवृक्ष पर चढ़ गया। उसने ऐसी जगह आयुधों को छिपाया जहाँ वर्षा का पानी भी न गिर सके, अंत में उस पर एक शव को रखा।

शव को पेड़ पर चढ़ाते दूर से शायद ग्वालों ने देख लिया। इसलिए पांडवों ने उन लोगों से कहा—"भाइयो, एक सौ आठ वर्ष की हमारी माता का देहांत हो गया है। हम अपने रिवाज़ के अनुसार शव को इस पेड़ पर रख रहे हैं।"

इसके बाद वे लोग विराट नगर की ओर चल पड़े। उन लोगों ने आपस में एक दूसरे का नाम लेने के लिए अपने नये नाम जय, जयंत, विजय, जयत्सेन तथा जयद्बल रख लिये।

विराट नगर के जानेवाले रास्ते में युधिष्ठिर ने दुर्गा का ध्यान किया–"देवी, आप की शरण में आये हैं। हमारी रक्षा कीजिये।" देवी अपने दिव्य रूप में प्रत्यक्ष होकर बोली–"शीघ्र ही तुम युद्ध में विजयी होकर सुखी रहोगे।" इस प्रकार आशीर्वाद देकर दुर्गा अंतर्धान हो गयी।

इसके बाद युधिष्ठिर ने एक नदी में स्नान किया। हाथ जोड़कर धर्म देवता का ध्यान किया–"यक्ष के रूप में आपने मुझे जो वर दिया, उसे मैं अब चाहता हूँ।"

तुरंत युधिष्ठिर गेरुए वस्त्र तथा कमंडल सहित यति के रूप में बदल गया। बाक़ी लोगों के लिए आवश्यक उपकरण भी वहाँ पर प्रत्यक्ष हुए। सब ने अपने अपने वेश के लिए आवश्यक चीज़ें उठा लीं, और उन्हें पहन लीं।

युधिष्ठिर पांसों को अपने दुपट्टे के एक कोने में बांधकर राजा विराट की सभा में चल पड़ा। यति के वेष में होते हुए भी युधिष्ठर के तेज को देख राजा विराट चकित हो गया। अगर उसके साथ परिवार होता तो विराट उसे चक्रवर्ती ही मान लेता।

युधिष्ठर विराट के निकट जाकर बोला–"राजन, मैं अपना सर्वस्व खो चुका हूँ। कुछ समय तक मैं आपके दरबार में रहना चाहता हूँ। मेरा गोत्र वैयाघ्रपद है और मेरा नाम कंक है। मैं इसके पूर्व युधिष्ठिर का अंतरंग मित्र

बनकर रहा करता था। जुएँ में मैं युधिष्ठिर के हाथों में हार जाता तो वे कभी मुझसे धन नहीं मांगते थे। आप भी मेरे साथ ऐसा ही व्यवहार करे।"

इस पर विराट ने कहा—"मेरे परिवार के लोग आपके साथ अच्छा व्यवहार न करे तो मैं उन्हें दण्ड दूंगा। यदि कोई तुमसे धन या अनाज मांगे तो मुझसे कहो। मैं उन्हें दे दूंगा। सभी लोग मेरे बराबर ही तुम्हारे साथ व्यवहार करेंगे।"

इसके थोड़ी देर बाद काले वस्त्र पहने भीम राजा के पास आया। उसके एक हाथ में कलछी और दूसरे हाथ में छुरी थी। वह भी विराट के समीप जाकर बोला—"राजन, मैं एक रसोइया हूँ। मेरा नाम वल्लव है। मैं आपको तरह-तरह के व्यंजन बनाकर खिला सकता हूँ।"

"तुम्हें देखने पर मैं यक़ीन नहीं कर सकता कि तुम एक रसोइया हो।" विराट ने कहा।

"मेरी रसोई का स्वाद युधिष्ठिर जानते हैं। बल में भी मैं सबसे बढ़ा हुआ हूँ। आप के मनोरंजन के लिए मैं शेर और हथियों के साथ लड़ सकता हूँ।" भीम ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है। तुम हमारे रसोई घर में प्रधान रसोइया का काम करो।" ये शब्द कहकर विराट ने उसे रसोई घर में भेज दिया।

इस बीच द्रौपदी मैले कपड़े पहने केश बिखेरे सैरंध्री के वेष में गलियों में घूम रही थी, उसे देख नगर वासियों ने उससे पूछा—"बहन, तुम कौन हो? क्या काम करती हो?"

"मैं सैरंध्री हूँ। कोई मेरे खाने-पीने की जिम्मेदारी ले तो मैं उनकी सेवा कर सकती हूँ।" द्रौपदी ने जवाब दिया।

उस समय रानी सुधेष्णा राजमहल की छत पर टहल रही थी। उसने द्रौपदी को देख बुला भेजा और पूछा—"तुम कौन हो? क्या काम करती हो?"

"देवी! मैं सैरंध्री हूँ। मैं बाल संवारना, वेणी गूँथना, फूल गूँथना, वगैरह जानती हूँ। मैंने कृष्ण की पत्नी सत्य भामा, और पांडवों की पत्नी द्रौपदी को भी प्रसन्न किया है। दौपदी तो मुझे प्रेम से मालिनी पुकारा करती थी।" द्रौपदी ने विनय पूर्ण शब्दों में उत्तर दिया।

"तुम देखने में औरतों को भी आकृष्ट करने योग्य सुंदर हो। मुझे लगता है कि महाराजा अगर तुम्हें देख लेंगे, तो तुम्हारे मोह में पड़कर मुझे भूल जायेंगे। मैं यह सोचकर तुम्हें अपने अंत:पुर में रखने से डरती हूँ कि शायद राजा तुम्हारे मोह में पड़कर तुम्हारे गुलाम हो जाय।" रानी सुधेष्णा ने अपने मन की बात कही।

"महारानीजी! राजा विराट या कोई और मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। पांच बलवान गंधर्व पुत्र मेरे पति हैं। वे सदा-सर्वदा मेरा ख्याल किया करते हैं। मैं सब काम कर सकती हूँ, लेकिन मुझसे पैर धुलाने व झूठा खाने जैसे काम न ले। अगर कोई मुझे साधारण औरत समझ कर छेड़ने का प्रयत्न करे तो मेरे पति उन्हें रात की रात मार डालेंगे। मैं पराये पुरुष के सामने झुकनेवाली नहीं हूँ।" द्रौपदी ने कहा।

इस शर्त पर सुधेष्णा ने द्रौपदी को अपने घर रहने दिया।

इसके बाद नपुंसक के रूप में अर्जुन राजा विराट के पास आया। वह गाढ़े लाल रंग के कपड़े पहने हुये था। वह सभासदों को पार करके राजा के पास गया और बोला—"महाराज, मेरा नाम बृहन्नला है। नृत्यकला में मेरी समता कोई नहीं कर सकता। मैं वेणी और फूल गूँथना भी अच्छी तरह से जानता हूँ।" राजा विराट उसकी बातों पर विश्वास न कर सका और बोला—"तुम्हारे लंबे हाथ तथा भुजाओं को देखने पर तुम मुझे धनुर्धारी लगते हो?"

"नहीं महाराज! मैंने धनुष तक को नहीं देखा है, मैं संगीत जानता हूँ।

और नृत्य कर सकता हूं।" अर्जुन ने जवाब दिया।

इसके बाद राजा विराट ने अपनी पुत्री उत्तरा को बुलाकर कहा—"बेटी! आज से तुम इस बृहन्नला के पास नृत्य सीखो।" इस पर अर्जुन उत्तरा के साथ अंत:पुर में चला गया।

कुछ समय बाद राजा विराट अपने घोड़ों को देखने गया तो वहाँ पर नकुल को देखा जो घोड़ों की ओर ध्यान से देख रहा था। तब राजा ने अपने नौकरों से कहा—"लगता है कि यह युवक घोड़ों की नस्लें और उनकी देख-भाल करने की रीति जानता है। इसे मेरे पास दरबार में भेज दो।" यह कहकर राजा दरबार में चला गया।

नकुल ने दरबार में राजा के दर्शन करके बताया—"महाराज, मैं जीविका की खोज में इस देश में आया हूं। मुझे आप अपने घोड़ों की देख-भाल का काम सौंप दिजिये। मैं घोड़ों की बीमारी तथा उन्हें नियंत्रण में रखने का ढ़ंग जानता हूँ। एक जमाने में मैं युधिष्ठिर की अश्वशाला का अधिकारी था। मेरा नाम दामग्रन्धी है।"

उसकी बातों पर राजा विराट प्रसन्न हुआ और नकुल को घोड़ों तथा रथों का अधिपति नियुक्त किया।

और थोड़ी देर बाद सहदेव राज-सभा में आ पहुँचा। वह ग्वाले के वेष में फूल-मालाएँ पहने, हाथों में रस्से और बंसी लिये हुए था। उसने राजा के पास जाकर कहा—"महाराज! मैं आप की गायों की बीमारी और चोरों से रक्षा कर सकता हूँ। मैं देखूंगा कि आप की गायें और ज्यादा दूध दें। मैं अरिष्टनेमि नामक वैश्य हूँ। युधिष्ठिर की एक करोड़ गायें मेरे अधीन में थीं। लोग मुझे तंत्रीपाल कहकर पुकारते हैं।"

सहदेव की बातों से तृप्त होकर राजा विराट ने उसे गायों का अधिकारी नियुक्त किया।

इस प्रकार पांडव सब राजा विराट के आश्रय में जाकर अपने अज्ञातवास का समय बिताने लगे।

शिवपुराण

[१५]

इक्कीस गणाधिपतियों का विवाह विश्वदर्शी नामक उपब्रह्मा की पुत्रियों के साथ संपन्न हुआ। इस पर पार्वती ने शिवजी से कहा–"हे परमेश्वर! मेरे पुत्रों को अधिकार देकर गजासुर को आपने जो वर दिया, उसे भी सार्थक बना दीजिये।"

शिवजी पार्वती की इच्छा की पूर्ति करने के प्रयत्न में थे, तभी कुमारस्वामी ने प्रवेश करके पूछा कि उसे भी गणाधिपत्य दिलाया जाय।

"तुम्हें तो देवगणों का आधिपत्य दिया गया है। अब रुद्रगणों पर अधिकार लक्ष्मीगणाधिपतियों को देंगे। तुम भी इसे मान जाओ।" शिवजी ने कहा।

कुमारस्वामी ने नहीं माना, उसने गणाधिपत्य के लिए हठ भी किया।

इस पर शिवजी ने कुमारस्वामी तथा लक्ष्मीगणाधिपतियों में ज्येष्ट व्यक्ति के बीच एक प्रतियोगिता रखी। वह यह थी कि वे दोनों अपने-अपने वाहनों पर सवार हो, पुण्य तीर्थों के दर्शन करते हुए, तीर्थों में स्नान करके पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर कैलास को लौट आना होगा। जो पहले लौटेगा, उसी का समस्त गणों पर अधिकार होगा। इस शर्त को दोनों ने स्वीकार कर लिया। तब शिवजी ने कुमारस्वामी के लिए वाहन के रूप में मयूर दिया और चूहे के रूप में अपने पास स्थित गजासुर को लक्ष्मीगणाधिपति के वाहन के रूप में दिया। इस पर कुमारस्वामी मयूर पर सवार हो फुर्र से आकाश में उड़ चला गया।

अंतिम पृष्ठ का चित्र

लक्ष्मीगणाधिपति ने पार्वती के पास जाकर निवेदन किया–"माँ! देखती हो न, मेरे साथ कैसा अन्याय हुआ है? कुमारस्वामी बलवान है और लंबा भी है, उसे मयूर वाहन दिया गया है। हम तो नाटे हैं। मेरे तो सर और पेट इतने भारी हैं, उन्हें लेकर में चूहे पर कैसे यात्रा कर सकता हूँ? ऐसी परीक्षा लेने के बदले हमसे यह कहते तो कहीं अच्छा होता कि तुम्हें अधिकार न देंगे।"

"बेटा, तुम अपने मामा विष्णु के पास जाकर कोई उपाय जान लो।" पार्वती ने समझाया। लक्ष्मीगणाधिपति ने विष्णु के पास जाकर सारी कहानी बतायी और कहा–"मामाजी, क्या मैं कुमारस्वामी के साथ स्पर्धा करके पृथ्वी की परिक्रमा कर सकता हूँ? कुमारस्वामी तो कभी का चला गया है। मुझे तो कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे मैं उस अधिकार को प्राप्त कर लूं?"

इस पर विष्णु ने कहा–"बेटा, तुम चिंता न करो। यदि तुम शिवपंचाक्षरी का पांच लाख दफे जप करके पार्वती और परमेश्वर की तीन बार परिक्रमा करोगे तो तुम्हें पृथ्वी की परिक्रमा का फल तथा तीर्थयात्रा का फल भी प्राप्त होगा।"

लक्ष्मीगणाधिपति प्रसन्न हो उठा। स्नान करके दाभों के आसन पर बैठकर शिवपंचाक्षरी का जाप करने लगा।

इस बीच कुमारस्वामी मयूर वाहन पर प्रथम तीर्थ में पहुँचने ही जा रहा था कि वहाँ लक्ष्मीगणपति तभी स्नान समाप्त करके तीर्थ से जाते हुए दूर पर दिखाई दिया। कुमारस्वामी ने निकट जाकर देखा तो बालू में चूहे के पैरों के निशान थे।

कुमारस्वामी ने वहाँ पर इकट्ठे लोगों से पूछा–"महाशय, यहाँ पर एक बड़ी तोंदवाला नाटा आदमी चूहे पर सवार हो आकर क्या स्नान समाप्त करके चला गया?"

"जी हाँ, अभी अभी चला गया है। देखिये, वह जो दूर पर अभी दिखाई दे

रहा है। वह बड़ा पुण्यात्मा मालूम होता है। हम सबको ऐक एक स्वर्णमुद्रा दान देकर गया है।"

"वाह! इस नाटे ने कैसा काम किया है? यहाँ पर स्नान करते हुए समय बरबाद नहीं करना है। दूसरे तीर्थ में स्नान करूँगा।" यह सोचते कुमारस्वामी दूसरे तीर्थ के लिए चल पड़ा। लेकिन वहाँ पहुँचते ही उसे मालूम हो गया कि लक्ष्मीगणपति उस तीर्थ में तभी स्नान करके चला गया है।

हर तीर्थ में कुमारस्वामी का यही अनुभव हुआ। वह किसी भी तीर्थ का सेवन किये बिना पृथ्वी की परिक्रमा करके कैलास को लौट आया। इस बीच में लक्ष्मीगणपति ने शिवपंचाक्षरी का पांच लाख बार जाप किया, पार्वती और परमेश्वर की तीन बार परिक्रमा की और हाथ जोड़े उनके सामने खड़ा हो गया।

सभा में उपस्थित सभी लोग कानापूसी करने लगे–"यह लक्ष्मीगणपति पृथ्वी की परिक्रमा किये बिना ही गणाधिपत्य प्राप्त करना चाहता है।"

इतने में कुमारस्वामी लौट आया और पार्वती तथा परमेश्वर से बोला–"मैं गणाधिपत्य के योग्य नहीं हूँ। आप लोग गणपति को ही गणाधिपत्य दे दीजिये।"

सभा में उपस्थित लोग तथा शिव-पार्वती भी आश्चर्य में आ गये और कुमारस्वामी से

पूछा–"तुम्हारे यह कहने का कारण क्या है?"

"मैं विश्व के समस्त क्षेत्रों में गया हूँ, लेकिन मैंने किसी भी तीर्थ में स्नान नहीं किया, क्योंकि हर तीर्थ में यह लक्ष्मी गणपति मुझसे पहले स्नान करके जाते हुए दिखाई देता था। तीर्थों में स्नान करने वालों ने भी मुझसे यही बात कही। वह मुझसे ज्यादा शक्तिशाली है। वही रुद्रगणों के अधिपति बनने योग्य व्यक्ति है।" कुमारस्वामी ने कहा।

सभा में उपस्थित लोगों ने शिव पंचाक्षरी के महत्व को जान लिया और लक्ष्मी गणपति को रुद्रगणों के अधिपति बनाने की स्वीकृति दी। गणपति के रूप में उसका अभिषेक करने के प्रयत्न प्रारंभ हुए।

रुद्रगण सभी पवित्र नदियों तथा सप्त समुद्रों के जल ले आये। प्रमथ, भूतगण, गरुड़, गंधर्व, किन्नर, किंपुरुष, नाग तथा भूलोकवासियों को बुलाया गया। बृहस्पति ने अभिषेक का मुहूर्त निश्चित किया। उस मुहूर्त में लक्ष्मी गणपति, तथा उसकी पत्नी जयलक्ष्मी को नवरत्न खचित सिंहासन पर बिठा कर समस्त गणों तथा उसके भाइयों पर अधिकार दिया गया। तदुपरांत पार्वती और परमेश्वर ने अभिषेक किया। इसके बाद उन्होंने लक्ष्मी गणपति से कहा–"तुम और तुम्हारे भाई तीनों लोकों पर शासन करते रहो। जो तुम्हारे प्रति तपस्या करेगा, उनकी मदद करते हुए कार्यों को सफल बनाते रहो।"

इस बीच तारकासुर के मरने के बाद उसकी पत्नी अपने पुत्र तारकाक्ष, कमलाक्ष तथा विद्युन्माली को साथ ले रसातल को भाग गयी, वहाँ पर उन्हें शुक्राचार्य के द्वारा समस्त विद्याएँ सिखलायीं और उन्हें पाल-पोसकर बड़ा किया।

ये बच्चे जब बड़े हुए तब उन्होंने अपनी माता के द्वारा अपने पिता की मृत्यु का कारण जान लिया। तब वे सब मेरु पर्वत पर जाकर ब्रह्मा के प्रति घोर तपस्या करने लगे।

१२५. कोफुकंजि का गोपुर

जापान के "नर" नामक प्राचीन नगर में पांच मंजिलवाला यह गोपुर लगभग ५५० वर्ष पूर्व बनाया गया है। कांसे से निर्मित इसका "शिखर" बिजली को भी ग्रस लेता है। इस गोपुर की ऊँचाई १६५ फुट है। सामने दीखने वाले सरोवर का नाम "सरुसवा" है।

Photo by R. B. Shinde
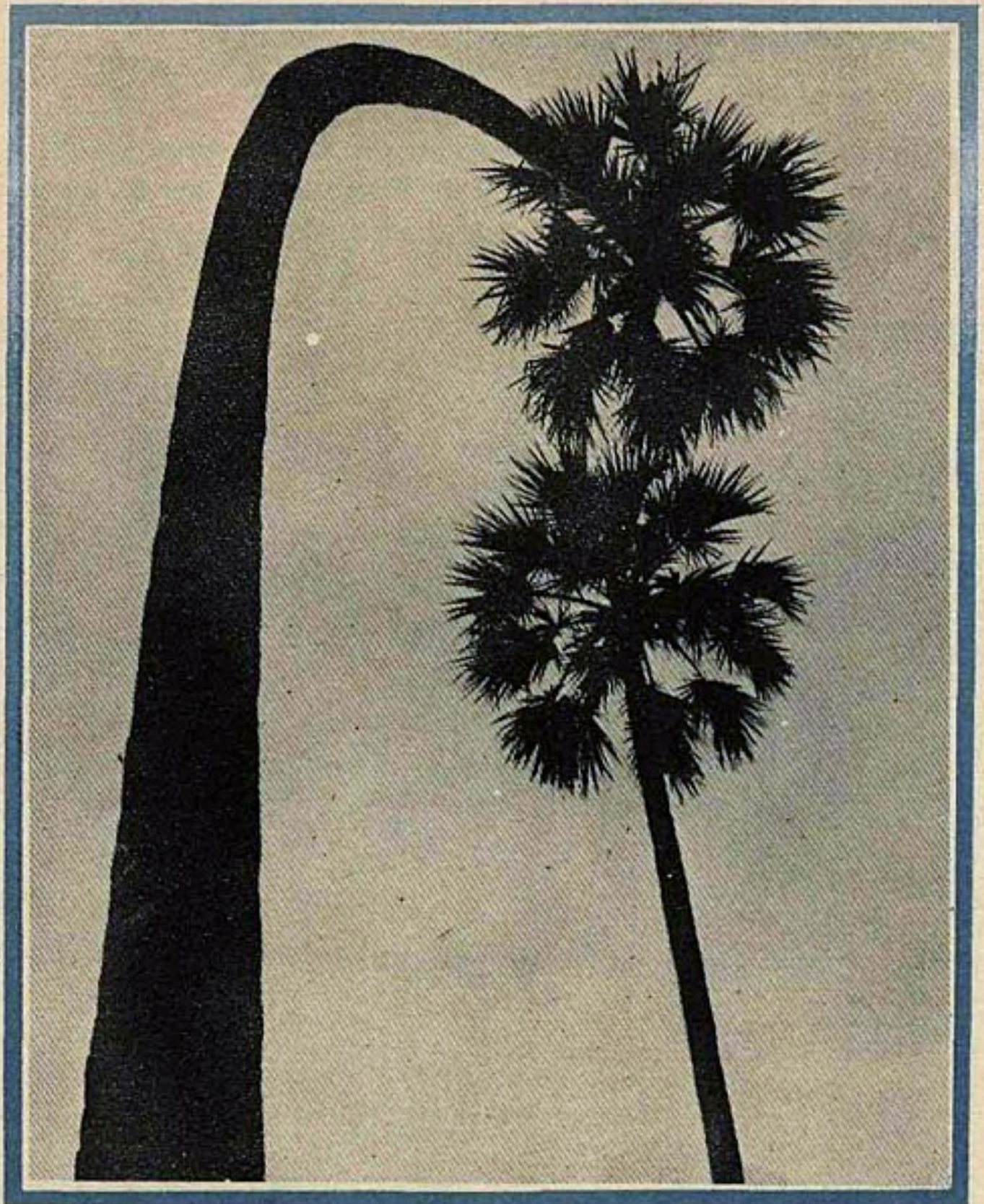
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

झुकनेवाले की जीत है।

प्रेषक :
ज्ञानकुमार

Photo by S. B. Takalkar

माऊ भण्डार, न्यूलिक
एल १८/१०, सिंगभूम

पंछी जैसा न मीत है ॥

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ मई ५ तक प्राप्त होनी चाहिए ।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई के अंक में प्रकाशित की जायंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा मुखपृष्ठ
लोक करतब (उ. प्र.)

तीसरा मुखपृष्ठ
लोक करतब (हरियाणा)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

आज मेरी उम्र नौ वर्ष की है
और प्रति दिन मेरी पूंजी बढ़ती जा रही है—

भेद जानना चाहते हैं ?

इसका आरम्भ तब हुआ जबकी मैं बहुत छोटी थी मेरे पिताजी ने सिर्फ रु० ५ - से चार्टर्ड बैंक में मेरे नाम से एक बचत खाता खोल दिया। और तब से लगातार हर महीने कुछ न कुछ बचा कर मैं डोनाल्ड डक मनी बॉक्स में रखती आई हूं।

आइये हम आपके
बच्चे की बचत की आदत
सीखने में मदद करें—
चार्टर्ड तरीके से—

दि चार्टर्ड बैंक

अमृतसर, बम्बई, कलकत्ता, कालीकट, कोचीन
दिल्ली, कानपुर, मद्रास, नई दिल्ली, सम्भाजी।

SEKAI/CB/367H

टैबी और परीक्षाएं

dCP/GLT/9a hin

CHANDAMAMA (Hindi) MAY 1972 92 Paise Including Excise Duty Regd. No. M. 5452

शिवपुराण